
कविकुलगुरु - कालिदास - संस्कृत - विश्वविद्यालयः

कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत विश्वविद्यालय, रामटेक

हस्तलिखित संग्रह

M-2519

दाखल क्र ________ विषय ________

नांव श्री दुर्गासप्तशती

लेखक/लिपीकार शिवदत्त मिश्र (सांपा)

पृष्ठ 264

काळ 1981 पूर्ण/अपूर्ण पूर्ण

'शिव' ग्रन्थ माला : ग्रन्थांक-४२

श्री दुर्गा सप्तशती

(संक्षिप्त-पाठविधि-हवनप्रयोग-शतचण्डीप्रयोगादि-
विविध-विषय-विभूषिता)

सम्पादक
व्याकरणाचार्य-साहित्यवारिधि
आचार्य पण्डित श्री शिवदत्त मिश्र शास्त्री
सम्पादकीय विभाग
भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी

प्रकाशक
ठाकुर प्रसाद ऐण्ड सन्स बुकसेलर
राजादरवाजा, वाराणसी—२,२१,००१

द्वितीय संस्करण]　　सन् १९८१ ई०　　[मूल्य : १०)



पं० शिवदत्त मिश्र शास्त्री



भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक का नाम है : 'दुर्गासप्तशती' अर्थात् सात सौ श्लोकों द्वारा दुर्गा चरित्र का वर्णन।

प्रायः यह देखने में आता है कि प्रत्येक प्राणी की यही इच्छा सदैव बलवती बनी रहती है कि मुझे भरपूर धन-सम्पत्ति एवं सुसन्तान की प्राप्ति हो, और मैं सदा-सर्वदा आरोग्य बना रहूँ। वस्तुतः गृहस्थाश्रम में इन तीनों के बिना मानव-जीवन ही व्यर्थ सिद्ध होता है। पर इन तीनों की प्राप्ति हो तो कैसे और किससे ? इसके लिए 'कलौ चण्डी-विनायकौ' के अनुसार कलियुग में सद्यः फलदायक महाशक्ति दुर्गा की आराधना के अतिरिक्त और कोई सुलभ, साधन नहीं है] क्योंकि—

"स्तुता सम्पूजिता पुष्पैर्धूप-गन्धादिभिस्तथा।
ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे गतिं शुभाम्॥

—दुर्गा, अ० १३, श्लोक ४१

अर्थात् भगवती दुर्गा की पुष्प, धूप, दीप एवं गन्ध आदि से विधिपूर्वक पूजा करके स्तुति-पाठ करनेवाले साधकों को धन-धान्य, पुत्र-पौत्र, निर्मल बुद्धि और उत्तम गति की प्राप्ति अवश्य होती है। भगवती दुर्गा के ही शब्दों में—

'स्मरन् ममैतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्कटात्।
मम प्रभावात् सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा॥

—दुर्गा०, अ० १२, श्लो० २९

अर्थात् जो साधक मेरे इस सप्तशती चरित्र का स्मरण-पाठ करता है, वह सभी संकटों से मुक्त हो जाता है। तथा मेरे प्रभाव से सिंह आदि हिंसक जन्तु, चोर एवं शत्रुगण भी उससे दूर भाग जाते हैं। नित्यप्रति दुर्गा सप्तशती के पाठ करनेवालों के लिए तो यहाँ तक कहा गया है कि,

"यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्।"

अर्थात् साधक जिस-जिस वस्तु को इच्छा करता है, उसकी प्राप्ति उसे अवश्य ही होती है।

आद्याशक्ति भगवती दुर्गा की उपासना एवं स्तोत्र-पाठ आदि की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। इन्द्रादि देवगणों ने भी आपत्ति काल में अपने स्तुति-पाठ के द्वारा जगज्जननी भगवती दुर्गा को प्रसन्न कर महाबलशाली महिष, शुम्भ-निशुम्भ एवं चण्ड-मुण्ड नामक राक्षसों का संहार कराया। महाशक्ति की उपासना का ही परिणाम है कि राजा सुरथ का शत्रुओं से छीना हुआ राज्य पुनः उसे प्राप्त हुआ, और समाधि नामक वैश्य का मोहजनित अज्ञान दूर हुआ। जिसका विस्तृत वर्णन 'दुर्गा सप्तशती' के तीन चरित्रों में किया गया है।

इसी तरह वर्तमान युग में भी आद्य शंकराचार्य, कवि शिरोमणि कालिदास, राम-कृष्ण परमहंस, क्षत्रपति शिवाजी, मदनमोहन मालवीय एवं सम्प्रति विद्यमान श्री कमलापति त्रिपाठी प्रभृति महानुभावों ने भी जगदम्बा भगवती दुर्गा की उपासना के बल पर ही असंख्य जन-समुदाय का कल्याण करते हुए विश्व में अपनी विजय-वैजयन्ती फहरा कर अमर कीर्ति सुदृढ़ किया है। उसी जगज्जननी भगवती दुर्गा का चरित्र-चित्रण प्रस्तुत पुस्तक में प्रथम, मध्यम और उत्तम इन तीन चरित्रों में वर्णित है।

यद्यपि दुर्गा सप्तशती के अनेक संस्करण प्रकाशित हुए हैं, किन्तु प्रस्तुत संस्करण की विशेषता अपने में सर्वथा नवीन एवं महत्त्वपूर्ण है। पाठक वर्ग के पाठ-सुविधाओं को ध्यान में रखकर मोटे अक्षरों में, सभी श्लोकों को पृथक्-पृथक् रूप में, विशुद्ध संशोधन-सम्पादन के साथ प्रस्तुत संस्करण प्रकाशित किया गया है। आशा है, दुर्गा सप्तशती के पाठ कर्ताओं के लिए यह नव-संस्करण विशेष सुविधाप्रद सिद्ध होगा।

वाराणसी के विश्वविख्यात पुस्तक-प्रतिष्ठान ठाकुर प्रसाद ऐण्ड सन्स प्रकाशन, राजा-दरवाजा, वाराणसी के सञ्चालक महोदय श्री मुकुन्दलालजी गुप्त का मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने बड़ी ही लगन एवं तत्परता के साथ विशुद्ध मुद्रण, आकर्षक साज-सज्जा से सुसज्जित कर सर्वांग सुन्दर प्रस्तुत संस्करण का प्रकाशन कर दुर्गाराधन प्रेमी पाठकों का महान् उपकार किया है।

अक्षयतृतीया

१४ मई, १९७५

—शिवदत्त मिश्र शास्त्री

सी. के. ५१२६ ए.,

भिखारीदास लेन,

वा रा ण सी–१

शतचण्डी-पूजन-हवन-सामग्री

दु. स. | ६

० . २५ रोरी, ०, २५ नारा
धूपबत्ती १ पैकेट
केशर २ माशा
०.२५ कपूर, ०.५० सिन्दूर
०.२४ अबीर-बुका
चावल ५ किलो
पान २५ प्रतिदिन
सोपारी १ किलो
पेड़ा १ पाव प्रतिदिन
बतासा १।। किलो
ऋतुफल प्रतिदिन १२
गोबर, गोमूत्र
दूध २।। सौ ग्राम प्रतिदिन
दही १ सौ ग्राम ,,
घी २।। सौ ग्राम ,,
चीनी २।। सौ ग्राम ,,
शहद १ बोतल
१ कोड़ी यज्ञोपवीत

इत्र १ शीशी
गुलाबजल १ शीशी
पंचमेवा ऽ।। किलो
पुष्प छुट्टा प्रतिदिन
माला १२ प्रतिदिन
कुशा, गंगाजल, तुलसी,
इत्र, विल्वपत्र प्रतिदिन
१.०० इलायची, १०० लौंग
नारियल ८, गरीगिरि ५
० . २५ का प्रत्येक लाल रंग
पीला रंग, हरा रंग, काला रंग,
पञ्चपल्लव, पञ्चरत्न की पुड़िया ५
०. ५० सर्वौषधि, सप्तमृत्तिका
०. २५ मेंहदी पीसी
०. २५ हल्दी बुकनी
०. १५ काली मिर्च
०.१५ गुरुच, अनार २
०. १० पीली सरसों
०. २० लाल चन्दन

बा० | ६

दु.स.

तेल सुगन्धित १ शीशी
काला उड़द ऽ।। किलो
चौकी काठ की ५
पीढ़ा ३, कुश।
खम्भा केले का ४
२.०० नवग्रह की समिधा
कलश ५ मिट्टी का
कलश १ ताँबे का
पत्तल २५
काँसे का कटोरा १
काँसे की कटोरी २
पूर्णपात्र और खीर पकाने की भगोना २
दुर्गा के लिए वस्त्र
सफेद कपड़ा ३ गज
लाल कपड़ा १। गज
सौभाग्य पिटारी
दुर्गा की मूर्ति सुवर्ण की

वरण-सामग्री
११ ब्राह्मणों के लिए —
धोती, दुपट्टा,
अँगोछा, लोटा, दुर्गा की
पुस्तक, आसन प्रत्येक को
हवन-सामग्री—
तिल २५ किलो
यव ६ किलो
चावल १२।। किलो
चीनी ३ किलो
घी ५ किलो
कमलगट्टा आधा किलो
गुग्गुल २।। सौ ग्राम
भोजपत्र २।। सौ ग्राम
चन्दन का चूरा ऽ।। किलो
आम की लकड़ी २ मन
(विशेष मेरे द्वारा सम्पादित 'दुर्गार्चन-पद्धति' देखें)

विशेष—यह सामग्री शतचण्डी की है। सहस्रचण्डी, लक्षचण्डी तथा कोटिचण्डी में उत्तरोत्तर हवन, वरण एवं देय द्रव्य में वृद्धि कर लेनी चाहिए।

विषयानुक्रमणिका

आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-संस्कृता

श्री दुर्गासप्तशती

संक्षिप्त-सप्तशती-पाठ-विधिः

नत्वा भगवतीं दुर्गां शिवदत्तसुधीरहम् ।
विद्वज्जनहितार्थाय शुद्धां सप्तशतीं ब्रुवे ॥

पाठकर्ता नित्य स्नानादि-क्रियां कृत्वा, प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य, 'ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः' इति त्रिराचम्य[1] ।

ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यो सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्य च्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः

---

१. अथवा—'ॐ ऐं आत्मतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा, ॐ ह्रीं विद्यातत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा, ॐ क्लीं शिवतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्वतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा' इत्याचम्य ।

पुने तच्छकेयम् ॥ इति मन्त्रेण पवित्रधारणं कृत्वा, प्राणायामत्रयं कुर्यात् ।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥

इत्यात्मानं पूजासामग्रीं च सम्प्रोक्ष्य, हस्तेऽक्षत-पुष्पाणि गृहीत्वा, 'आ नो भद्राः०'–'सुमुखश्चैकदन्तश्चे'त्यादि-मङ्गलमन्त्रान् पठित्वा, हस्ते जला-ऽक्षत-पुष्प-द्रव्याण्यादाय सङ्कल्पं कुर्यात् । तद्यथा–

संकल्पः

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याऽद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे विष्णुपदे श्रीश्वेत-वाराहकल्पे वैवस्वत-मन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशे पुण्यप्रदेशे (अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने महाश्मशाने गौरीमुखे त्रिकण्टक-

विराजिते भागीरथ्याः पश्चिमभागे) विक्रमशके बौद्धावतारे अमुक-
नाम-संवत्सरे श्रीसूर्ये अमुकायने अमुक-ऋतौ महामाङ्गल्यप्रद-
मासोत्तमे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुक-
नक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे-अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशि-
स्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथं-राशि-
स्थान-स्थितेषु सत्सु एवंगुण-विशेषण-विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ
ममाऽऽत्मनः श्रुति-स्मृति-पुराणोक्त-फलप्राप्त्यर्थम् अमुकगोत्रोत्पन्नः
अमुकशर्माऽहम् अमुकगोत्रस्य अमुक-यजमानस्य आयुरा-
रोग्यैश्वर्याऽभिवृद्ध्यर्थं विपुल - पुत्र - पौत्राद्यनवच्छिन्न - सन्तति-
वृद्धि-स्थिरलक्ष्मी-कीर्तिलाभ-शत्रुपराजय-सदभीष्टसिद्ध्यर्थं श्रीमहा-
काली - महालक्ष्मी - महासरस्वती - त्रिगुणात्मिका - पराम्बा - जगदम्बा-
प्रीत्यर्थं 'मार्कण्डेय उवाच' इत्यारभ्य 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्तं
सप्तशतीपाठं (अथवा अमुकमन्त्रेण प्रतिमन्त्र-सम्पुटितपाठं च)

तत्राऽऽदौ कवचा-ऽर्गला-कीलकमाद्यन्तयोरष्टोत्तरशत-नवार्णमन्त्र-जप-पुरस्सरं क्रमेण रात्रिसूक्त-देवीसूक्त-पठनमन्ते रहस्यत्रयं च करिष्ये ।

इति सङ्कल्पं कृत्वा, नवरात्रे विशिष्ट-यज्ञ-यागादिषु च मत्प्रणीत-दुर्गार्चनपद्धत्यनुसारेण गणापत्यादि-पूजनं विधाय गन्धादिभिः ब्राह्मणान् सम्पूजयेत् ।

पुस्तकपूजनम्

ततः—'नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥'

इत्यनेन पुस्तकं गन्धा-ऽक्षत-पुष्पैः सम्पूज्य, कवचा-ऽर्गला-कीलकानि पठित्वा न्यासादिपूर्वकं नवार्णमन्त्रं जपेत् ।

पश्चाद् रात्रिसूक्तं पठित्वा, विनियोग-कर-हृदयादिन्यासं विधाय, 'विद्युद्दामसमप्रभामि'ति ध्यानं कृत्वा, 'मार्कण्डेय उवाच' इत्यारभ्य 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्तं दुर्गासप्तशत्याः पाठं कुर्यात् ।

अन्ते उत्तरन्यासपूर्वकं दुर्गादेव्याः 'विद्युद्दामे'ति ध्यात्वा देवीसूक्तं पठेत् ।

५ तत अष्टोत्तरशत-नवार्णमन्त्रस्य जपं कृत्वा, तदुत्तरन्यासान् विधाय, 'गुह्या-ऽतिगुह्य-गोप्त्री'ति पठित्वा देव्या वामहस्ते जपं निवेद्य रहस्यत्रयं पठेत् । पश्चादुत्तरपूजां विधाय आरातिक-मन्त्रपुष्पाञ्जलिं क्षमा-प्रार्थनां च कृत्वा प्रणमेत् ।

इति संक्षिप्त-सप्तशती-पाठ-विधिः समाप्ता ॥



ब्रह्मशापविमोचनम्

विनियोगः

५ ॐ अस्य श्रीचण्डिकाया ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्र-शापविमोचन-मन्त्रस्य वसिष्ठ-नारद-संवाद-सामवेदाधिपतिब्रह्माण ऋषयः सर्वैश्वर्य-

कारिणी श्रीदुर्गा देवता चरित्रत्रयं बीजं, ह्रीं शक्तिः, त्रिगुणात्मस्वरूप चण्डिकाशापविमुक्तौ मम सङ्कल्पितकार्य-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ॐ (ह्रीं) रीं रेतःस्वरूपिण्यै मधु-कैटभ-मर्दिन्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १ ॥ ॐ श्रीं बुद्धिस्वरूपिण्यै महिषासुरसैन्यनाशिन्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ २ ॥ ॐ रं रक्तस्वरूपिण्यै महिषासुरमर्दिन्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ३ ॥ ॐ क्षुं क्षुधास्वरूपिण्यै देववन्दितायै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ४ ॥ ॐ छां छायास्वरूपिण्यै दूतसंवादिन्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ५ ॥ ॐ शं शक्तिस्वरूपिण्यै धूम्रलोचनघातिन्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्र-शापाद् विमुक्ता भव ॥ ६ ॥ ॐ तृं तृषास्वरूपिण्यै चण्ड-मुण्ड-वधकारिण्यै ब्रह्मा-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ७ ॥ ॐ क्षां क्षान्तिस्वरूपिण्यै रक्तबीजवधकारिण्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वा-

मित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥८॥ ॐ जां जातिस्वरूपिण्यै निशुम्भ-
वधकारिण्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ९ ॥
ॐ लं लज्जास्वरूपिण्यै शुम्भवधकारिण्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्र-
शापाद् विमुक्ता भव ॥ १० ॥ ॐ शां शांतिस्वरूपिण्यै देवस्तुत्यै
ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ११ ॥ ॐ श्रं श्रद्धा-
स्वरूपिण्यै सकलफलदात्र्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता
भव ॥१२॥ ॐ कां कान्तिस्वरूपिण्यै राजवरप्रदायै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वा-
मित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १३ ॥ ॐ मां मातृस्वरूपिण्यै अनर्गल-
महिमसहितायै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १४ ॥
ॐ ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै सं सर्वैश्वर्यकारिण्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद्
विमुक्ता भव ॥ १५ ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिवायै अभेद्यकवच-
स्वरूपिण्यै ब्रह्म-वसिष्ठ-विश्वमित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १६ ॥
ॐ क्रीं काल्यै कालि ह्रीं फट् स्वाहायै ऋग्वेदस्वरूपिण्यै ब्रह्म-

वसिष्ठ-विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १७ ॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-स्वरूपिण्यै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गा-देव्यै नमः ॥ १८ ॥

इत्येवं हि महामन्त्रान् पठित्वा परमेश्वर ! ।
चण्डीपाठं दिवा रात्रौ कुर्यादेव न संशयः ॥१९॥
एवं मन्त्रं न जानाति चण्डीपाठं करोति यः ।
आत्मानं चैव दातारं क्षीणं कुर्यान्न संशयः ॥२०॥

इति रुद्रयामले ब्रह्मशापविमोचनं समाप्तम् ॥



कुञ्जिका स्तोत्रम्

शिव उवाच

शृणु देवि ! प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम् ।
येन मन्त्रप्रभावेण चण्डीजापः शुभो भवेत् ॥ १ ॥

न कवचं नाऽर्गलास्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम् ।
न सूक्तं नाऽपि ध्यानं च न न्यासो न च वाऽर्चनम् ॥ २ ॥
कुञ्जिकापाठमात्रेण दुर्गापाठफलं लभेत् ।
अति गुह्यतरं देवि ! देवानामपि दुर्लभम् ॥ ३ ॥
गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति ! ।
मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भनोच्चाटनादिकम् ।
पाठमात्रेण संसिद्ध्येत् कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम् ॥ ४ ॥

मन्त्रः—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे । ॐ ग्लौं हुं क्लीं जूं सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा । इति मन्त्रः ।

नमस्ते रुद्ररूपिण्यै नमस्ते मधुमर्दिनि ।
नमः कैटभहारिण्यै नमस्ते महिषार्दिनि ॥ १ ॥
नमस्ते शुम्भहन्त्र्यै च निशुम्भासुरघातिनि ॥ २ ॥

जाग्रतं हि महादेवि ! जपं सिद्धं कुरुष्व मे ।
ऐंकारी सृष्टिरूपायै ह्रींकारी प्रतिपालिका ॥ ३ ॥
क्लींकारी कामरूपिण्यै बीजरूपे नमोऽस्तु ते ।
चामुण्डा चण्डघाती च यैकारी वरदायिनी ॥ ४ ॥
विच्चे चाऽभयदा नित्यं नमस्ते मन्त्ररूपिणि ॥ ५ ॥
धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वूं वागधीश्वरी ।
क्रां क्रीं क्रूं कालिका देवी शां शीं शूं मे शुभं कुरु ॥ ६ ॥
हुं हुं हुंकाररूपिण्यै जं जं जं जम्भनादिनी ।
भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो नमः ॥ ७ ॥
अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षं ।
धिजाग्रं धिजाग्रं त्रोटय त्रोटय दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा ।
पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा ।

सां सीं सूं सप्तशतीदेव्या मन्त्रसिद्धिं कुरुष्व मे ॥ ८ ॥
इदं तु कुञ्जिकास्तोत्रं मन्त्रजागर्तिहेतवे ।
अभक्ते नैव दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वति ! ॥ ९ ॥
यस्तु कुञ्जिकया देवि ! हीनां सप्तशतीं पठेत् ।
न तस्य जायते सिद्धिररण्ये रोदनं यथा ॥ १० ॥

इति रुद्रयामले गौरीतन्त्रे शिव-पार्वती-संवादे कुञ्जिकास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।



शापोद्धारमन्त्रः

ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं क्रां क्रीं चण्डिके देवि शापानुग्रहं कुरु कुरु स्वाहा ।

इति सप्तवारं जपेत् ।

उत्कीलनमन्त्रः

श्रीं क्लीं ह्रीं सप्तशति चण्डिके उत्कीलनं कुरु कुरु स्वाहा ।

इति [illegible] वारं जपेत ।

मृतसंजीवनामन्त्रः

ॐ ह्रीं ह्रीं वं वं ऐं ऐं मृतसंजीवनि विद्ये मृतमुत्थापयोत्थापय क्रीं ह्रीं ह्रीं वं स्वाहा ।

इत्यादावन्ते च सप्तवारं जपेत् ।

देव्यथर्वशीर्षम्

ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवीति ? ॥ १ ॥

साऽब्रवीत्–अहं ब्रह्मस्वरूपिणी मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत् । शून्यं चाऽशून्यं च ॥२॥ अहमानन्दाऽनानन्दौ । अहं विज्ञानाऽविज्ञाने अहं ब्रह्माऽब्रह्मणी वेदितव्ये । अहं पञ्चभूतान्यपञ्चभूतानि । अहमखिलं जगत् ॥३॥ वेदोऽहमवेदोऽहम् । विद्याहमविद्याहम् । अजाहमनजाहम् । अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम् ॥४॥ अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि । अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः । अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्मि । अहमिन्द्राग्नी अह-

मश्विनावुभौं ॥ ५ ॥ अहं सोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि । अहं विष्णुमुरुक्रमं ब्रह्माणमुत प्रजापतिं दधामि ॥६॥ अहं दधामि द्रविणं हविष्यमते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते । अहं राष्ट्रीय सङ्गमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् । अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे । य एवं वेद । स दैवीं सम्पदमाप्नोति ॥ ७ ॥

ते देवा अब्रुवन्—

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ ८ ॥
तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम् ।
दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः ॥ ९ ॥
देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ॥१०॥
कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम् ।
सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम् ॥११॥

महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥१२॥
आदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव ।
तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः ॥१३॥
कामो योनिः कमला वज्रपाणिर्गुहा हसा मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः ।
पुनर्गुहा सकला मायया च गुरूच्चैषा विश्वमातादिविद्योम् ॥१४॥
एषाऽऽत्मशक्तिः । एषा विश्वमोहिनी । पाशा-ऽङ्कुश-धनुर्बाण-
धरा । एषा श्रीमहाविद्या । य एवं वेद स शोकं तरति ॥१५॥
नमस्ते अस्तु भगवति मातरस्मान् पाहि सर्वतः ॥१६॥
सैषाऽष्टौ वसवः । सैषैकादश रुद्राः । सैषा द्वादशादित्याः ।
सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च । सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि
पिशाचा यक्षाः सिद्धाः । सैषा सत्त्वरजस्तमांसि । सैषा ब्रह्म-विष्णु-

रुद्ररूपिणी । सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः । सैषा ग्रह-नक्षत्र-ज्योतींषि । कलाकाष्ठादिकालरूपिणी । तामहं प्रणौमि नित्यम् ।

दु०
१५

पापापहारिणीं देवीं भुक्ति-मुक्ति-प्रदायिनीम् ।
अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां शिवदां शिवाम् ॥१७॥

वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम् ।
अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ॥१८॥

एवमेकाक्षरं ब्रह्म यतयः शुद्धचेतसः ।
ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः ॥१९॥

वाङ्माया ब्रह्मसूस्तस्मात् षष्ठं वक्त्रसमन्वितम् ।
सूर्योऽवाम-श्रोत्र-बिन्दुसंयुक्तष्टात्तृतीयकः ॥
नारायणेन सम्मिश्रो वायुश्चाधरयुक् ततः ।
विच्चे नवार्णकोऽर्णः स्यान्महदानन्ददायकः ॥२०॥

दे०

हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् ।
पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम् ।
त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुघां भजे ॥२१॥
नमामि त्वां महादेवीं महाभय-विनाशिनीम् ।
महादुर्ग-प्रशमनीं महाकारुण्य - रूपिणीम् ॥२२॥

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया । यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता । यस्या लक्ष्यं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या । यस्या जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अजा । एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका । एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यते नैका । अत एवोच्यते अज्ञेयानन्तालक्ष्याजैका नैकेति ॥२३॥

मन्त्राणां मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी ।
ज्ञानानां चिन्मयातीता[1] शून्यानां शून्यसाक्षिणी ।
यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता ॥२४॥

१. चिन्मयानन्दा' इति पाठान्तरम् ।

तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम् ।
नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् ॥ २५ ॥

इदमथर्वशीर्षं योऽधीते स पञ्चाथर्वशीर्षजपफलमाप्नोति इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योऽर्चां स्थापयति–

शतलक्षं प्रजप्त्वाऽपि सोऽर्चासिद्धिं न विन्दति ।
शतमष्टोत्तरं चाऽस्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः ।
दशवारं पठेद् यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते ।
महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः ॥ २६ ॥

सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति । निशीथे तुरीयसन्ध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति । नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासान्निध्यं भवति । प्राणप्रतिष्ठायां जप्त्वा प्राणानां प्रतिष्ठा भवति । भौमाश्विन्यां महादेवीसन्निधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति । स महामृत्युं तरति य एवं वेद ॥ इत्युपनिषत् । इति देव्यथर्वशीर्षं समाप्तम्

देवी-कवचम्

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीचण्डीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, चामुण्डा देवता, अङ्गन्यासोक्तमातरो बीजम्, दिग्बन्ध-देवतास्तत्त्वम्, श्रीजगदम्बाप्रीत्यर्थे सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

ॐ नमश्चण्डिकायै । मार्कण्डेय उवाच

ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् ।
यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ? ॥ १ ॥

ब्रह्मोवाच

अस्ति गुह्यतमं विप्र ! सर्वभूतोपकारकम् ।
देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने ! ॥ २ ॥

प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी ।
तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥ ३ ॥
पञ्चमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च ।
सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाऽष्टमम् ॥ ४ ॥
नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः ।
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥ ५ ॥
अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे ।
विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः ॥ ६ ॥
न तेषां जायते किञ्चिदशुभं रणसङ्कटे ।
नापदं तस्य पश्यामि शोक-दुःख-भयं न हि ॥ ७ ॥

यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषां वृद्धिः प्रजायते ।
ये त्वां स्मरन्ति देवेशि ! रक्षसे तान्न संशयः ॥ ८ ॥

प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना ।
ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुडासना ॥ ९ ॥

माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखिवाहना ।
लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया ॥१०॥

श्वेतरूपधरा देवी ईश्वरी वृषवाहना ।
ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरण-भूषिता ॥११॥

इत्येता मातरः सर्वाः सर्वयोग-समन्विताः ।
नानाभरण-शोभाढ्या नानारत्नोपशोभिताः ॥१२॥

दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः ।
शङ्खं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम् ॥१३॥
खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च ।
कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ॥१४॥
दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च ।
धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ॥१५॥
नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोर-पराक्रमे ।
महाबले महोत्साहे महाभय-विनाशिनी ॥१६॥
त्राहि मां देवि ! दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्द्धिनी ।
प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ॥१७॥

दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां खड्गधारिणी ।
प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद् वायव्यां मृगवाहिनी ॥१८॥
[1]उदीच्यां पातु कौमारी ऐशान्यां शूलधारिणी ।
ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद् वैष्णवी तथा ॥१९॥
एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना ।
जया मे चाऽग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः ॥२०॥
अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चाऽपराजिता ।
शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ॥२१॥
मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद् यशस्विनी ।
त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च नासिके ॥२२॥

१. 'रक्षेदुदीच्यां कौमारी' इति च । २. 'ईशान्यां' इत्यपि पाठः ।

शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी ।
कपोलौ कालिका रक्षेत् कर्णमूले तु शाङ्करी ॥२३॥
नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका ।
अधरे चाऽमृतकला जिह्वायां च सरस्वती ॥२४॥
दन्तान् रक्षतु कौमारी [1]कण्ठमध्ये च चण्डिका ।
घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके ॥२५॥
कामाक्षी चिबुकं रक्षेद् वाचं मे सर्वमङ्गला ।
ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी ॥२६॥
नीलग्रीवा बहिःकण्ठे नलिकां नलकूबरी ।
स्कन्धयोः खड्गिनी रक्षेद् बाहू मे वज्रधारिणी ॥२७॥

१. 'कण्ठदेशे' इति ।

हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चाङ्गुलीषु च ।
नखाञ्छूलेश्वरी रक्षेत् कुक्षौ रक्षेत् कुलेश्वरी ॥२८॥
स्तनौ रक्षेन् महादेवी मनःशोक-विनाशिनी ।
हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी ॥२९॥
नाभौ च कामिनी रक्षेद् गुह्यं गुह्येश्वरी तथा ।
पूतना कामिका मेढ्रं गुदे महिषवाहिनी ॥३०॥
कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी ।
जङ्घे महाबला रक्षेत् सर्वकाम-प्रदायिनी ॥३१॥
गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी ।
पादाङ्गुलीषु श्री रक्षेत् [1]पादाऽधस्थलवासिनी ॥३२॥

१. 'पादालधस्तवासिनी' इति ।

नखान् दंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी ।
रोमकूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा ॥३३॥
रक्त-मज्जा-वसा-मांसान्यस्थि-मेदांसि पार्वती ।
अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ॥३४॥
पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा ।
ज्वालामुखी [1]नखज्वालामभेद्या सर्वसन्धिषु ॥३५॥
शुक्रं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ।
अहङ्कारं मनो बुद्धिं रक्षेन् मे धर्मधारिणी ॥३६॥
प्राणाऽपानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम् ।
वज्रहस्ता च मे रक्षेत् [2]प्राणकल्पं च शोभना ॥३७॥

१. 'नसाजालमभेद्यां' । २. 'प्राणं कल्याणशोभना' इति ।

रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी ।
सत्त्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ॥३८॥
आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी ।
यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ॥३९॥
गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत् पशून् मे रक्ष चण्डिके ।
पुत्रान् रक्षेन् महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी ॥४०॥
पन्थानं सुपथा रक्षेन् मार्गं क्षेमकरी तथा ।
राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतः स्थिता ॥४१॥
रक्षाहीनं तु यत् स्थानं वर्जितं कवचेन तु ।
तत्सर्वं रक्ष मे देवि ! जयन्ती पापनाशिनी ॥४२॥

पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः ।
कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ॥४३॥

तत्र तत्राऽर्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः ।
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥४४॥

परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् ।
निर्भयो जायते मर्त्यः सङ्ग्रामेष्वपराजितः ॥४५॥

त्रैलोक्ये तु भवेत् पूज्यः कवचेनाऽऽवृतः पुमान् ।
इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् ॥४६॥

यः पठेत् प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयाऽन्वितः ।
दैवीकला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः ॥४७॥

जीवेद् वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ।
नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूता-विस्फोटकादयः ॥४८॥
स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं चाऽपि यद्विषम् ।
अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्र-यन्त्राणि भूतले ॥४९॥
भूचराः खेचराश्चैव [1]कुलजाश्चोपदेशिकाः ।
सहजाः कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा ॥५०॥
अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः ।
ग्रह-भूत-पिशाचाश्च यक्ष-गन्धर्व-राक्षसाः ॥५१॥
ब्रह्म-राक्षस-वेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ।
नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते ॥५२॥

१. 'जलजा' इति ।

मानोन्नतिर्भवेद् [1]राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम् ।
यशसा वर्द्धते सोऽपि कीर्ति-मण्डित-भूतले ॥५३॥
जपेत् सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ।
यावद् भूमण्डलं धत्ते स-शैल-वन-काननम् ॥५४॥
तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्र-पौत्रिकी ।
देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् ॥५५॥
प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामाया-प्रसादतः ।
लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते ॥५६॥

इति वाराहपुराणे हरिहरब्रह्मविरचितं देव्याः कवचं समाप्तम् ।



१. 'राज्य तेजों' इति ।

अर्गलास्तोत्रम्

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीअर्गलास्तोत्रमन्त्रस्य विष्णुर्ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहालक्ष्मीर्देवता, श्रीजगदम्बाप्रीतये सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

ॐ नमश्चण्डिकायै । मार्कण्डेय उवाच

ॐ जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥१॥
जय त्वं देवि ! चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणि ।
जय सर्वगते देवि ! कालरात्रि ! नमोऽस्तु ते ॥२॥
मधु-कैटभ-विद्रावि विधातृवरदे नमः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥३॥

महिषासुरनिर्णाशि भक्तानां सुखदे नमः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ४ ॥

रक्तबीजवधे देवि ! चण्ड-मुण्ड-विनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ५ ॥

शुम्भस्यैव निशुम्भस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ६ ॥

वन्दिताङ्घ्रियुगे देहि सर्वसौभाग्यदायिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ७ ॥

अचिन्त्यरूपचरिते सर्वशत्रुविनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ८ ॥

नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ९ ॥
स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१०॥
चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥११॥
देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१२॥
विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१३॥

विधेहि देवि ! कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१४॥
सुरा-ऽसुर-शिरोरत्न-निघृष्ट-चरणेऽम्बिके ! ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१५॥
विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१६॥
प्रचण्ड-दैत्य-दर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१७॥
चतुर्भुजे चतुर्वक्त्र-संस्तुते परमेश्वरि ! ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१८॥

कृष्णेन संस्तुते देवि! शश्वद्भक्त्या सदाम्बिके! ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१९॥

हिमाचल-सुतानाथ-संस्तुते परमेश्वरि! ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२०॥

इन्द्राणीपति-सद्भाव-पूजिते परमेश्वरि! ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२१॥

देवि! प्रचण्ड-दोर्दण्ड-दैत्यदर्प-विनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२२॥

देवि! भक्तजनोद्दाम-दत्तानन्दोदयेऽम्बिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२३॥

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम् ।
तारिणीं दुर्गसंसार-सागरस्य कुलोद्भवाम् ॥२४॥
इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः ।
स तु सप्तशतीसंख्या-वरमाप्नोति सम्पदाम् ॥२५॥

इति देव्या अर्गलास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

कीलकस्तोत्रम्

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीकीलकमन्त्रस्य शिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहासरस्वती देवता, श्रीजगदम्बाप्रीत्यर्थं सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

ॐ नमश्चण्डिकाय । मार्कण्डेय उवाच

विशुद्ध-ज्ञान-देहाय त्रिवेदी-दिव्य-चक्षुषे ।
श्रेयःप्राप्ति-निमित्ताय: नमः सोमार्द्धधारिणे ॥१॥

सर्वमेतद् विजानीयान्मन्त्राणामपि[1] कीलकम् ।
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः ॥२॥
सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि ।
एतेन स्तुवतां देवीं स्तोत्रमात्रेण सिद्ध्यति ॥३॥
न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते ।
विना जाप्येन सिद्ध्येत सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥४॥
समग्राण्यपि सिद्ध्यन्ति लोकशङ्कामिमां हरः ।
कृत्वा निमन्त्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥५॥
स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तं चकार सः ।
[2]समाप्नोति सुपुण्येन तां यथावन्नियन्त्रणाम् ॥६॥

१. 'मभि' इति । २. 'समाप्तिर्न च पुण्यस्य' इति ।

सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेव[1] न संशयः ।
कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥७॥
ददाति प्रतिगृह्णाति नाऽन्यथैषा [2]प्रसीदति ।
इत्थंरूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम् ॥८॥
यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम् ।
स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः ॥९॥
न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह[3] जायते ।
नाऽपमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥१०॥
ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत न कुर्वाणो विनश्यति ।
ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥११॥

१. 'सर्वमेवं' इति । २. 'प्रसिद्ध्यति' इति । ३. 'क्वापि हि' इति ।

सौभाग्यादि च यत् किञ्चिद् दृश्यते ललनाजने ।
तत्सर्वं त्वत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् ॥१२॥
शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन् स्तोत्रे सम्पत्तिरुच्चकैः ।
भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥१३॥
ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः ।
शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ? ॥१४॥

इति श्रीभगवत्याः कीलकस्तोत्रं समाप्तम् ।



नवार्णमन्त्रजपविधिः

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु रुद्रा ऋषयः, गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः, ऐं बीजम्, ह्रीं

शक्तिः, क्लीं कीलकम्, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीप्रीत्यर्थे जपे न्यासे च विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः

ब्रह्म-विष्णु-रुद्रऋषिभ्यो नमः, शिरसि । गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः, मुखे । महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीदेवताभ्यो नमः, हृदि । ऐं बीजाय नमः, गुह्ये । ह्रीं शक्तये नमः, पादयोः । क्लीं कीलकाय नमः, नाभौ । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः, सर्वाङ्गे ।

करादिन्यासः

ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः । ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

हृदयादिन्यासः

ॐ ऐं हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ क्लीं शिखायै वषट् । ॐ चामुण्डायै कवचाय हुम् । ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट् ।

अक्षरन्यासः

ॐ ऐं नमः, शिखायाम् । ॐ ह्रीं नमः, दक्षिणनेत्रे । ॐ क्लीं नमः, वामनेत्रे । ॐ चां नमः, दक्षिणकर्णे । ॐ मुं नमः वामकर्णे । ॐ डां नमः, दक्षिणनासापुटे । ॐ ऐं नमः, वामनासापुटे । ॐ विं नमः मुखे । ॐ च्चें नमः, गुह्ये । एवं विन्यस्याऽष्टवारं मूलेन व्यापकं कुर्यात् ।

दिङ्न्यासः

ॐ ऐं प्राच्यै नमः । ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः । ॐ ह्रीं दक्षिणायै

नमः । ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः । ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः । ॐ क्लीं वायव्यै नमः । ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः । ॐचामुण्डायै ऐशान्यै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः ।

ध्यानम्

खड्गंचक्र-गदेषु-चाप-परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् ।
नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥१॥
अक्ष-स्रक्-परशुं गदेषु-कुलिशं पद्मं धनुःकुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ।
शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभ-मर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥२॥

घण्टा-शूल-हलानि शङ्ख-मुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त विलसच्छीतांशु-तुल्यप्रभाम् ।
गौरीदेह-समुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादि-दैत्यार्दिनीम् ॥३॥

ततः 'ऐं ह्रीं अक्षमालिकायै नमः' इति मालां सम्पूज्य, प्रार्थयेत्।

माला-प्रार्थना

ॐ मां माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ! ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥१॥
अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥२॥

तत्पश्चात् 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इति नवार्णमन्त्र-मष्टोत्तरशतं जपेत् । ततः—

गुह्याऽतिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणाऽस्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि ! त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ! ॥

इति पठित्वा देव्या वामकरे जपं निवेदयेत् ।

इति नवार्णमन्त्र-जपविधिः समाप्ता ।



ऋग्वेदोक्तं रात्रिसूक्तम्

ॐ रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्यक्षभिः ।
विश्वा अधि श्रियोऽधित ॥ १ ॥
ओर्वप्रा अमर्त्या निवतो देव्युद्वतः । ज्योतिषा बाधते
तमः ॥२॥ निरु स्वसारमस्कृतोषसं देव्यायती । अपेदु

हासते तमः ॥ ३ ॥ सा नो अद्य यस्या वयं नि ते यामन्नविक्ष्महि । वृक्षे न वसतिं वयः ॥ ४ ॥

नि ग्रामासो अविक्षत नि पद्वन्तो नि पक्षिणः । नि श्येनासश्चिदर्थिनः ॥५॥ यावया वृक्यं वृकं यवय स्तेनमूर्म्ये । अथा नः सुतरा भव ॥६॥ उप मा पेपिशत्तमः कृष्णं व्यक्तमस्थित । उष ऋणेव यातय ॥७॥

उप ते गा इवाकरं वृणीष्व दुहितर्दिवः । रात्रि स्तोमं न जिग्युषे ॥ ८ ॥

[ऋग्वेद, मण्डल १०, सूक्त १२७, मन्त्र १०८]

इति ऋग्वेदोदोक्तं रात्रिसूक्तं समाप्तम् ।



ॐ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थिति-संहार-कारिणीम् ।
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥१॥

ब्रह्मोवाच

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका ।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥२॥
अर्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ।
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि ! जननी परा ॥३॥
त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत् सृज्यते जगत् ।
त्वयैतत् पाल्यते देवि ! त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥४॥

दु.स.

४६

विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने।
तथा संहृति-रूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥५॥
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः।
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ॥६॥
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रय-विभाविनी।
कालरात्रि-र्महारात्रि-र्मोहरात्रिश्च दारुणा ॥७॥
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा।
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च॥८॥
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा।
शङ्खिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी-परिघायुधा ॥९॥

क.

४६

दु.स.
४७

सौम्या सौम्यतराशेष-सौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ।
पराऽपराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥१०॥

यच्च किञ्चित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाऽखिलात्मिके ।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ॥११॥

यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत् पात्यत्ति यो जगत् ।
सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥१२॥

विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च ।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ।१३॥

सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि ! संस्तुता ।
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु-कैटभौ ॥१४॥

रा.
४७

प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ।
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥१५॥

इति रात्रिसूक्तं सम्पूर्णम् ।



सप्तशतीन्यासाः

विनियोगः प्रथम-मध्यमोत्तम-चरित्राणां ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा ऋषयः, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवता, गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि, नन्दा-शाकम्भरी-भीमाः शक्तयः, रक्तदन्तिका-दुर्गाभ्रामर्यो बीजानि, अग्नि-वायु-सूर्या-स्तत्त्वानि, ऋग्-यजुः-सामवेदा ध्यानानि, सकल-कामना-सिद्धये श्रीमहाकाली-महा-लक्ष्मी-महासरस्वती-देवताप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

करन्यासः

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शङ्खिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी-परिघायुधा ॥ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः

शूलेन पाहि नो देवि ! पाहि खड्गेन चाऽम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ तर्जनीभ्यां नमः ।
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ मध्यमाभ्यां नमः ।
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ अनामिकाभ्यां नमः ।
खड्ग-शूल-गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लव-सङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति-समन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते ॥ करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

इति करन्यासः ।

हृदयादिन्यासः

'खड्गिनी शूलिनी घोरा०'–हृदयाय नमः ।
'शूलेन पाहि नो देवि०'–शिरसे स्वाहा ।
'प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च०'–शिखायै वषट् ।
सौम्यानि यानि रूपाणि०'–कवचाय हुम् ।
'खड्ग-शूल-गदादीनि०'–नेत्रत्रयाय वौषट् ।
'सर्वस्वरूपे सर्वेशे०'–अस्त्राय फट् ।

इति हृदयादिन्यासः

ध्यानम्

विद्युद्दाम-समप्रभां मृगपति-स्कन्ध-स्थितां भीषणां
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदाऽसि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्र-शास्त्रि-संस्कृता

श्रीदुर्गासप्तशती

प्रथमोऽध्यायः [१]

विनियोगः—ॐ प्रथमचरित्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, महाकाली देवता, गायत्री छन्दः, नन्दा शक्तिः, रक्तदन्तिका बीजम्, अग्निस्तत्त्वम्, ऋग्वेदः स्वरूपम्, श्रीमहाकालीप्रीत्यर्थे प्रथमचरित्रजपे विनियोगः ।

ध्यानम्

खड्गं चक्र-गदेषु-चाप-परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् ।
नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥

'ॐ ऐं' मार्कण्डेय उवाच ॥ १ ॥

सावर्णिः सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः ।
निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम ॥ २ ॥
महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः ।
स बभूव महाभागः सावर्णिस्तनयो रवेः ॥ ३ ॥
स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः ।
सुरथो नाम राजाऽभूत् समस्ते क्षितिमण्डले ॥ ४ ॥
तस्य पालयतः सम्यक् प्रजाः पुत्रानिवौरसान् ।
बभूवुः शत्रवो भूपाः कोलाविध्वंसिनस्तदा ॥ ५ ॥
तस्य तैरभवद् युद्धमतिप्रबलदण्डिनः ।
न्यूनैरपि स तैर्युद्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः ॥ ६ ॥

ततः स्वपुरमायातो निजदेशाधिपोऽभवत् ।
आक्रान्तः स महाभागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः ॥७॥
अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः ।
कोशो बलं चापहृतं तत्राऽपि स्वपुरे ततः ॥८॥
ततो मृगयाव्याजेन हृतस्वाम्यः स भूपतिः ।
एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् ॥९॥
स तत्राश्रममद्राक्षीद् द्विजवर्यस्य मेधसः ।
प्रशान्तश्वापदाकीर्णं मुनिशिष्योपशोभितम् ॥१०॥
तस्थौ कञ्चित् स कालं च मुनिना तेन सत्कृतः ।
इतश्चेतश्च विचरंस्तस्मिन् मुनिवराश्रमे ॥११॥

सोऽचिन्तयत्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनः[1] ।
मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत् ॥१२॥
मद्भृत्यैस्तैरसद्वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा ।
न जाने स प्रधानो मे शूरहस्ती सदामदः ॥१३॥
मम वैरिवशं यातः कान् भोगानुपलप्स्यते ।
ये ममानुगता नित्यं प्रसाद-धन-भोजनैः ॥१४॥
अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्यमहीभृताम् ।
असम्यग्-व्यय-शीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम् ॥१५॥
सञ्चितः सोऽतिदुःखेन क्षयं कोशो गमिष्यति ।
एतच्चाऽन्यच्च सततं चिन्यामास पार्थिवः ॥१६॥

१. 'ममत्वाकृष्टमानसः' इति पाठान्तरम् ।

तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः ।
स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो हेतुश्चागमनेऽत्र कः ॥१७॥
स-शोक इव कस्मात्त्वं दुर्मना इव लक्ष्यसे ।
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम् ॥१८॥
प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम् ॥१९॥

वैश्य उवाच ॥ २० ॥

समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले ॥२१॥
पुत्र-दारैर्निरस्तश्च धनलोभादसाधुभिः ।
विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् ॥२२॥
वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाऽऽप्तबन्धुभिः ।
सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशलाऽकुशलात्मिकाम् ॥२३॥

प्रवृत्तिं स्वजनानां च दाराणां चाऽत्र संस्थितः ।
किं नु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम् ॥२४॥
कथं ते किं नु सद्वृत्ता दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः ॥२५॥

राजोवाच ॥ २६ ॥

यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः पुत्र-दारादिभिर्धनैः ॥२७॥
तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम् ॥२८॥

वैश्य उवाच ॥ २९ ॥

एवमेतद्यथा प्राह भवानस्मद्गतं वचः ॥३०॥
किं करोमि न बन्धाति मम निष्ठुरतां मनः ।
यः सन्त्यज्य पितृस्नेहं धनलुब्धैर्निराकृतः ॥३१॥

दु.स.
५७

पतिस्वजनहार्दं च हार्दिं तेष्वेव मे मनः ।
किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महामते ! ॥३२॥
यत्प्रेमप्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु ।
तेषां कृते मे निश्वासो दौर्मनस्यं च जायते ॥३३॥
करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम् ॥३४॥

मार्कंण्डेय उवाच ॥ ३५ ॥

ततस्तौ सहितौ विप्र तं मुनिं समुपस्थितौ ॥३६॥
समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिवसत्तमः ।
कृत्वा तु तौ यथान्यायं यथार्हं तेन संविदम् ॥३७॥
उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्यपार्थिवौ ॥३८॥

अ७
१
५७

राजोवाच ॥ ३९ ॥

भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् ॥४०॥
दुःखाय यन्मे मनसः स्वचित्तायत्ततां विना ।
ममत्वं गतराज्यस्य राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि ॥४१॥
जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनिसत्तम ।
अयं च [1]निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः ॥४२॥
स्वजनेन च सन्त्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति ।
एवमेष तथाऽहं च द्वावप्यत्यन्त-दुःखितौ ॥४३॥
दृष्टदोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्टमानसौ ।
तत् किमेतन्महाभाग यन्मोहो ज्ञानिनोरपि ॥४४॥

१. 'निष्कृतः' इति ।

ममाऽस्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढता ॥४५॥

ऋषिरुवाच ॥ ४६ ॥

ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषयगोचरे ॥४७॥
विषयश्च[1] महाभाग! याति[2] चैवं पृथक् पृथक् ।
दिवान्धाः प्राणिनः केचिद् रात्रावन्धास्तथापरे ॥४८॥
केचिद्दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्यदृष्टयः ।
ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किं[3] नु ते न हि केवलम् ॥४९॥
यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशु-पक्षि-मृगादयः ।
ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृगपक्षिणाम् ॥५०॥

१. 'विषयाश्च' । २. 'यान्ति' । ३. किं तु' इति ।

दु. स.　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　अ०

मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्यमन्यत्तथोभयोः ।
ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान् पतङ्गाञ्छावचञ्चुषु ॥५१॥
कणमोक्षादृतान् मोहात् पीड्यमानानपि क्षुधा ।
मानुषा मनुजव्याघ्र साभिलाषाः सुतान् प्रति ॥५२॥
लोभात् प्रत्युपकाराय नन्वेतान् किं न पश्यति[1] ।
तथाऽपि ममतावर्तें मोहगर्तें निपातिताः ॥५३॥
महामायाप्रभावेण संसारस्थितिकारिणा ।
तन्नाऽत्र विस्मयः कार्यो योगनिद्रा जगत्पतेः ॥५४॥
महामाया हरेश्चैषा तया सम्मोह्यते जगत् ।
ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ॥५५॥

६० १ ६०

१. 'पश्यसि' इति ।

बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ।
तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराऽचरम् ॥५६॥
सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये ।
सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ॥५७॥
संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥५८॥

राजोवाच ॥ ५९ ॥

भगवन् का हि सा देवी महामायेति यां भवान् ॥६०॥
ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज ! ।
यत्प्रभावा च सा देवी यत्स्वरूपा यदुद्भवा ॥६१॥
तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्मविदां वर ! ॥६२॥

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ॥६४॥
तथापि तत्समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम ।
देवानां कार्यसिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा ॥६५॥
उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते ।
योगनिद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवीकृते ॥६६॥
आस्तीर्य शेषमभजत् कल्पान्ते भगवान् प्रभुः ।
तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधु-कैटभौ ॥६७॥
विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ ।
स नाभिकमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः ॥६८॥

दु. स.

६२

अ०

१

६३

दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम् ।
तुष्टाव योगनिद्रां तामेकाग्रहृदयस्थितः ॥६९॥
विबोधनार्थाय हरेर्हरिनेत्रकृतालयाम् ।
विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थिति-संहार-कारिणीम् ॥७०॥
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥७१॥

ब्रह्मोवाच ॥ ७२ ॥

त्वं स्वाहा त्वं-स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका। ॥७३॥
सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ।
अर्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ॥७४॥
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि ! जननी परा ।
त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत् सृज्यते जगत् ॥७५॥

त्वयैतत् पाल्यते देवि ! त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ।
विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ॥७६॥
तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ।
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ॥७७॥
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ।
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ॥७८॥
कालरात्रि-र्महारात्रि-र्मोहरात्रिश्च दारुणा ।
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ॥७९॥
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च ।
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥८०॥

शङ्खिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी-परिघायुधा ।
सौम्या सौम्यतराशेष-सौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ॥८१॥
पराऽपराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ।
यच्च किंचित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाऽखिलात्मिके ॥८२॥
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ।
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ॥८३॥
सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ।
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च ॥८४॥
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ।
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ॥८५॥

मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु-कैटभौ ।
प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ॥८६॥
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥८७॥

ऋषिरुवाच ॥ ८८ ॥

एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा ॥८९॥
विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं मधु-कैटभौ ।
नेत्रास्य-नासिका-बाहु-हृदयेभ्यस्तथोरसः ॥९०॥
निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः ॥९१॥
एकार्णवेऽहिशयनात् ततः स ददृशे च तौ ।
मधु-कैटभौ दुरात्मानावतिवीर्यपराक्रमौ ॥९२॥

क्रोधरक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ ।
समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान् हरिः ॥९३॥
पञ्चवर्षसहस्राणि बाहुप्रहरणो विभुः ।
तावप्यतिबलोन्मत्तौ महामायाविमोहितौ ॥९४॥
उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तो व्रियतामिति केशवम् ॥९५॥

श्रीभगवानुवाच ॥९६॥

भवेतामद्य मे तुष्टौ मम बध्यावुभावपि ॥९७॥
किमन्येन वरेणाऽत्र एतावद्धि वृतं मम ॥९८॥

ऋषिरुवाच ॥९९॥

वञ्चिताभ्यामिति तदा सर्वमापोमयं जगत् ॥१००॥
विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान् कमलेक्षणः ।

आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता ॥१०१

ऋषिरुवाच ॥१०२॥

तथेत्युक्त्वा भगवता शङ्ख-चक्र-गदाभृता ।
कृत्वा चक्रेण वै च्छिन्ने जघने शिरसी तयोः ॥१०३॥
एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम् ।
प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते ॥ ऐं ॐ १०४॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
मधु-कैटभवधो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

उवाच १४, अर्धश्लोकाः २४, श्लोकाः ६६, एवमादितः ॥१०४॥

द्वितीयोऽध्यायः [२]

विनियोगः—ॐ मध्यमचरित्रस्य विष्णुर्ऋषिर्महालक्ष्मीर्देवता, उष्णिक् छन्दः, शाकम्भरी शक्तिः, दुर्गा बीजम्, वायुस्तत्त्वम्, यजुर्वेदः स्वरूपम्, श्रीमहालक्ष्मीप्रीत्यर्थं मध्यमचरित्रजपे विनियोगः ।

ध्यानम्

ॐ अक्ष-स्रक्-परशुं गदेषु-कुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ।
शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभ-मर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥

'ॐ ह्रीं' ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

देवासुरमभूद् युद्धं पूर्णमब्दशतं पुरा ।
महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे ॥२॥
तत्राऽसुरैर्महावीर्यैर्देवसैन्यं पराजितम् ।
जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः ॥३॥
ततः पराजिता देवाः पद्मयोनिं प्रजापतिम् ।
पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेशगरुडध्वजौ ॥४॥
यथावृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुरचेष्टितम् ।
त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिभवविस्तरम् ॥५॥
सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च ।
अन्येषां चाऽधिकारान् स स्वयमेवाधिष्ठति ॥६॥

स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि ।
विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना ॥७॥
एतद्वः कथितं सर्वममरारिविचेष्टितम् ।
शरणं वः प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम् ॥८॥
इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः ।
चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटी-कुटिलाननौ ॥९॥
ततोऽतिकोपपूर्णस्य चक्रिणो वदनात्ततः ।
निश्चक्राम महत्तेजो ब्रह्मणः शङ्करस्य च ॥१०॥
अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः ।
निर्गतं सुमहत्तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत ॥११॥

अतीव तेजसः कूटं ज्वलन्तमिव पर्वतम् ।
ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वालाव्याप्त-दिगन्तरम् ॥१२॥
अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम् ।
एकस्थं तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा ॥१३॥
यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाऽजायत तन्मुखम् ।
याम्येन चाऽभवन् केशा बाहवो विष्णुतेजसा ॥१४॥
सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मध्यं चैन्द्रेण चाऽभवत् ।
वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्तेजसा भुवः ॥१५॥
ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदङ्गुल्योऽर्कतेजसा ।
वसूनां च कराङ्गुल्यः कौबेरेण च नासिका ॥१६॥

तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः प्राजापत्येन तेजसा ।
नयनत्रितयं जज्ञे तथा पावकतेजसा ॥१७॥
भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च ।
अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा ॥१८॥
ततः समस्त-देवानां तेजोराशिसमुद्भवाम् ।
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः ॥१९॥
शूलं शूलाद् विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकधृक् ।
चक्रं च दत्तवान् कृष्णः समुत्पाद्य स्वचक्रतः ॥२०॥
शङ्खं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः ।
मारुतो दत्तवांश्चापं बाणपूर्णे तथेषुधी ॥२१॥

वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः ।
ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद् गजात् ॥२२॥

कालदण्डाद्यमो दण्डं पाशं चाम्बुपतिर्ददौ ।
प्रजापतिश्चाऽक्षमालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥२३॥

समस्त-रोमकूपेषु निजरश्मीन् दिवाकरः ।
कालश्च दत्तवान् खड्गं तस्याश्चर्म च निर्मलम् ॥२४॥

क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे ।
चूडामणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च ॥२५॥

अर्धचन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान् सर्वबाहुषु ।
नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम् ॥२६॥

दु. स.

अङ्गुलीयकरत्नानि समस्तास्वङ्गुलीषु च ।
विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुं चाऽतिनिर्मलम् ॥२७॥

अ० २

अस्त्राण्यनेकरूपाणि तथाभेद्यं च दंशनम् ।
अम्लानपङ्कजां मालां शिरस्युरसि चापराम् ॥२८॥
अददज्जलधिस्तस्यै पङ्कजं चाऽतिशोभनम् ।
हिमवान् वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च ॥२९॥
ददावशून्यं सुरया पानपात्रं धनाधिपः ।
शेषश्च सर्वनागेशो महामणिविभूषितम् ॥३०॥
नागहारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम् ।
अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा ॥३१॥

सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः ।
तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः ॥३२॥

अमायतातिमहता प्रतिशब्दो महानभूत् ।
चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे ॥३३॥

चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च महीधराः ।
जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंहवाहिनीम् ॥३४॥

तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्ति-नम्रात्म-मूर्तयः ।
दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः ॥३५॥

संनद्धाखिलसैन्यास्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः ।
आः किमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषासुरः ॥३६॥

अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः ।
स ददर्श ततो देवीं व्याप्तलोकत्रयां त्विषा ॥३७॥

पादाक्रान्त्या नतभुवं किरीटोल्लिखिताम्बराम् ।
क्षोभिताशेषपातालां धनुर्ज्यानिःस्वनेन ताम् ॥३८॥

दिशो भुजसहस्रेण समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम् ।
ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुरद्विषाम् ॥३९॥

शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपित-दिगन्तरम् ।
महिषासुर सेनानीश्चिक्षुराख्यो महासुरः ॥४०॥

युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्गबलान्वितः ।
रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महासुरः ॥४१॥

अयुध्यतायुतानां च सहस्रेण महाहनुः ।
पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महासुरः ॥४२॥
अयुतानां शतैः षड्भिर्बाष्कलो युयुधे रणे ।
गजवाजि-सहस्रौघैरनेकैः परिवारितः ॥४३॥
वृतो रथानां कोट्या च युद्धे तस्मिन्नयुध्यत ।
बिडालाख्योऽयुतानां च पञ्चाशद्भिरथायुतैः ॥४४॥
युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः ।
अन्ये च तत्रायुतशो रथ-नाग-हयैर्वृताः ॥४५॥
युयुधुः संयुगे देव्या सह तत्र महासुराः ।
कोटि-कोटि-सहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा ॥४६॥

हयानां च वृतो युद्धे तत्राऽभून्महिषासुरः ।।४६।।
तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा ।।४७।।
युयुधुः संयुगे देव्याः खड्गैः परशु-पट्टिशैः ।
केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित पाशांस्तथापरे ।।४८।।
देवीं खड्गप्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः ।
साऽपि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका ।।४९।।
लीलयैव प्रचिच्छेद निज-शस्त्रास्त्र-वर्षिणी ।
अनायस्तानना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः ।।५०।।
मुमोचाऽसुरदेहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी ।
सोऽपि क्रुद्धो धुतसटो देव्या वाहनकेशरी ।।५१।।

चचाराऽसुरसैन्येषु वनेष्विव हुताशनः ।
निःश्वासान् मुमुचे यांश्च युध्यमाना रणेऽम्बिका ॥५२॥
त एव सद्यः सम्भूता गणाः शतसहस्रशः ।
युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपाला-ऽसि-पट्टिशैः ॥५३॥
नाशयन्तोऽसुरगणान् देवीशक्त्युपबृंहिताः ।
अवादयन्त पटहान् गणाः शङ्खांस्तथाऽपरे ॥५४॥
मृदङ्गांश्च तथैवाऽन्ये तस्मिन् युद्धमहोत्सवे ।
ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्ति-वृष्टिभिः ॥५५॥
खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महासुरान् ।
पातयामास चैवाऽन्यान् घण्टास्वनविमोहितान् ॥५६॥

असुरान् भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत ।
केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः खड्गपातैस्तथापरे ॥५७॥
विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते ।
वेमुश्च केचिद्-रुधिरं मुसलेन भृशं हताः ॥५८॥
केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि ।
निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद्रणाजिरे ॥५९॥
श्येनानुकारिणः प्राणान् मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः ।
केषाञ्चिद् बाहवश्छिन्नाश्छिन्नग्रीवास्तथापरे ॥६०॥
शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः ।
विच्छिन्नजङ्घास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महासुराः ॥६१॥

एकबाह्वक्षिचरणाः केचिद् देव्या द्विधा कृताः ।
छिन्नेऽपि चाऽन्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः ॥६२॥
कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीतपरमायुधाः ।
ननृतुश्चाऽपरे तत्र युद्धे तूर्यलयाश्रिताः ॥६३॥
कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्ग-शक्त्यृष्टि-पाणयः ।
तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो देवीमन्ये महासुराः ॥६४॥
पातितै रथनागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा ।
अगम्या साऽभवत्तत्र यत्राऽभूत स महारणः ॥६५॥
शोणितौघा महानद्यः सद्यस्तत्र प्रसुस्रुवुः ।
मध्ये चाऽसुरसैन्यस्य वारणा-ऽसुर-वाजिनाम् ॥६६॥

क्षणेन तन्महासैन्यमसुराणां तथाऽम्बिका ।
निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृणदारुमहाचयम् ॥६७॥
स च सिंहो महानादमुत्सृजन्धुतकेशरः ।
शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति ॥६८॥
देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं महासुरैः ।
यथैषां [1]तुतुषुर्देवाः पुष्पवृष्टिमुचो दिवि ॥ॐ॥६९॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
महिषासुरसैन्यवधो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥
उवाच १, श्लोकाः ६८, एवम् ६९, एवमादितः ॥१७३॥



१. 'तुष्टुवुर्देवा' इति ।

तृतीयोऽध्यायः [३]

ध्यानम्

ॐ उद्यद्भानु-सहस्रकान्तिमरुण-क्षौमां शिरोमालिकां
रक्तालिप्त-पयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम्।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्र-विलसद् वक्त्रारविन्दश्रियं
देवीं बद्ध-हिमांशु-रत्नमुकुटां वन्देऽरविन्दस्थिताम्॥

ऋषिरुवाच ॥१॥

निहन्यमानं तत्सैन्यमवलोक्य महासुरः।
सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद् ययौ योद्धुमथाम्बिकाम् ॥२॥

स देवीं शरवर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः ।
यथा मेरुगिरेः श्रृङ्गं तोयवर्षेण तोयदः ॥ ३ ॥
तस्यच्छित्त्वा ततो देवी लीलयैव शरोत्करान् ।
जघान तुरगान् बाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम् ॥ ४ ॥
चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चाऽतिसमुच्छ्रितम् ।
विव्याध चैव गात्रेषु छिन्नधन्वानमाशुगैः ॥ ५ ॥
सच्छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः ।
अभ्यधावत तां देवीं खड्ग-चर्मधरोऽसुरः ॥ ६ ॥
सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्णधारेण मूर्धनि ।
आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यतिवेगवान् ॥ ७ ॥

तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृपनन्दन ! । ७ ॥
ततो जग्राह शूलं स कोपादरुणलोचनः ॥ ८ ॥
चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्रकाल्यां महासुरः ।
जाज्वल्यमानं तेजोभी रविबिम्बमिवाऽम्बरात् ॥ ९ ॥
दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवी शूलममुञ्चत ।
तच्छूलं शतधा तेन नीतं स च महासुरः ॥ १० ॥
हते तस्मिन् महावीर्ये महिषस्य चमूपतौ ।
आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ॥ ११ ॥
सोऽपि शक्तिंमुमोचाऽथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम् ।
हुङ्काराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् ॥ १२ ॥

भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोधसमन्वितः ।
चिक्षेप चामरः शूलं बाणैस्तदपि साच्छिनत् ॥१३॥
ततः सिंहः समुत्पत्य गजकुम्भान्तरे[1] स्थितः ।
बाहुयुद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा ॥१४॥
युद्ध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान् नागान् महीं गतौ ।
युयुधातेऽतिसंरब्धौ प्रहारैरतिदारुणैः ॥१५॥
ततो वेगात् खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा ।
कर प्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक्कृतम् ॥१६॥
उदग्रश्च रणे देव्या शिला-वृक्षादिभिर्हतः ।
दन्त-मुष्टि-तलैश्चैव करालश्च निपातितः ॥१७॥

---

१. 'गजकुम्भान्तरस्थितः' इति ।

देवी क्रुद्धा गदापातैश्चूर्णयामास चोद्धतम् ।
वाष्कलं भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथान्धकम् ॥१८॥

उग्रास्यमुग्रवीर्यं च तथैव च महाहनुम् ।
त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी ॥१९॥

बिडालस्यासिना कायात् पातयामास वै शिरः ।
दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यमक्षयम् ॥२०॥

एवं संक्षीयमाणे तु स्वसैन्ये महिषासुरः ।
माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान् गणान् ॥२१॥

कांश्चित्तुण्डप्रहारेण खुरक्षेपैस्तथापरान् ।
लाङ्गूलताडितांश्चान्यान्छृङ्गाभ्यांचविदारितान् ॥२२॥

वेगेन कांश्चिदपरान्नादेन भ्रमणेन च ।
निःश्वास-पवनेनाऽन्यान् पातयामास भूतले ॥२३॥

निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः ।
सिंहं हन्तुं महादेव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका ॥२४॥

सोऽपि कोपान् महावीर्यः खुरक्षुण्ण-महीतलः ।
शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च ॥२५॥

वेगभ्रमण-विक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत ।
लाङ्गूलेनाहतश्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः ॥२६॥

धुतशृङ्गविभिन्नाश्च खण्डं खण्डं ययुर्घनाः ।
श्वासानिलास्ताः शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः ॥२७॥

इति क्रोधसमाध्मातमापतन्तं महासुरम् ।
दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तद्-वधाय तदाकरोत् ॥२८॥
सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महासुरम् ।
तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महामृधे ॥२९॥
ततः सिंहोऽभवत् सद्यो यावत् तस्याम्बिका शिरः ।
छिनत्ति तावत् पुरुषः खडगपाणिरदृश्यत ॥३०॥
तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः ।
तं खड्गचर्मणा सार्धं ततः सोऽभून्महागजः ॥३१॥
करेण च महासिंहं तं चकर्ष जगर्ज च ।
कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत ॥३२॥

ततो महासुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः ।
तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं सचराऽचरम् ॥३३॥
ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम् ।
पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुणलोचना ॥३४॥
ननर्द चाऽसुरः सोऽपि बलवीर्यमदोद्धतः ।
विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान् ॥३५॥
सा च तान् प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः ।
उवाच तं मदोद्धूतमुखरागाकुलाक्षरम् ॥३६॥

देव्युवाच ॥ ३७ ॥

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ ! मधु यावत् पिबाम्यहम् ।
मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः ॥३८॥

ऋषिरुवाच ॥३९॥

एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽरूढा तं महासुरम् ।
पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत् ॥४०॥

ततः सोऽपि पदाऽऽक्रान्तस्तया निजमुखात्ततः ।
अर्द्धनिक्रान्त [1]एवासीद् देव्या वीर्येण संवृतः ॥४१॥

अर्द्धनिष्क्रान्त एवाऽसौ युध्यमानो महासुरः ।
तया महासिना देव्या शिरश्छित्त्वा निपातितः ॥४२॥

ततो हाहाकृतं सर्वं दैत्यसैन्यं ननाश तत् ।
प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवतागणः ॥४३॥

१. 'एवाति' इत्यपि पाठः ।

तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः ।
जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाऽप्सरोगणाः ॥४४॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
महिषासुरबधो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥
उवाच ३, श्लोकाः ४१, एवम् ४४, एवमादितः ॥ २१७ ॥



चतुर्थोऽध्यायः (४)

ध्यानम्

ॐ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये
तस्मिन् दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या।

तां तुष्टुवुः प्रणति-नम्र-शिरोधरांसा
वाग्भिः प्रहर्ष-पुलकोद्गम-चारुदेहाः ॥ २ ॥

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निश्शेष-देवगण-शक्तिसमूह-मूर्त्या ।
तामम्बिकामखिल-देव-महर्षि-पूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ॥ ३ ॥

यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च ।
सा चण्डिका-ऽखिल-जगत्परिपालनाय
नाशाय चाऽशुभभयस्य मतिं करोतु ॥ ४ ॥

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि! विश्वम् ॥ ५ ॥

किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्
किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि ।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि[1]
सर्वेषु देव्यसुर-देवगणादिकेषु ॥ ६ ॥

हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै-
र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा ।

१. 'तवातियानि' इति पाठान्तरम् ।

सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥७॥
यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन
तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि ! ।
स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु-
रुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥८॥
या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता [1]त्व-
मभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रिय-तत्त्वसारैः ।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्त-समस्त-दोषै-
र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि ! ॥९॥

१. 'च अभ्यस्यसे' इति ।

शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-

मुद्गीथरम्य-पद-पाठवतां च साम्नाम् ।

देवी त्रयी भगवती भवभावनाय

वार्त्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री ॥१०॥

मेधासि देवि ! विदिताखिलशास्त्रसारा

दुर्गासि दुर्गभव-सागरनौरसङ्गा ।

श्रीः कैटभारि-हृदयैक-कृताधिवासा

गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥११॥

ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्र-

बिम्बानुकारि कनकोत्तम-कान्ति-कान्तम् ।

अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथाऽपि
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥१२॥
दृष्ट्वा तु देवि ! कुपितं भ्रुकुटीकराल-
मुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न सद्यः ।
प्राणान् मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं
कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन ॥१३॥
देवि ! प्रसीद परमा भवती भवाय
सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि ।
विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेत-
न्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥१४॥

ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः ।
धन्यास्त एव निभृतात्मज-भृत्य-दारा
येषां सदाऽभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥१५॥
धर्म्याणि देवि! सकलानि सदैव कर्मा-
ण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति ।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादात्
लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि! तेन ॥१६॥
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।

दारिद्र्य-दुःख-भयहारिणि ! का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ॥१७॥

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि ! ॥१८॥

दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म
सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम् ।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता
इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी ॥१९॥

खड्ग-प्रभा-निकर-विस्फुरणैस्तथोग्रैः
शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् ।
यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्ड-
योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥२०॥

दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि! शीलं
रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः ।
वीर्यं च हन्तृ हृतदेवपराक्रमाणां
वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥२१॥

केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य?
रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र?।

चित्तो कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा
त्वय्येव देवि! वरदे भुवनत्रयेऽपि ॥२२॥
त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन
त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा।
नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त-
मस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ॥२३॥

शूलेन पाहि नो देवि! पाहि खड्गेन चाऽम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥२४॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥२५॥

सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥२६॥
खड्ग-शूल-गदादीनि यानि चाऽस्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥२७॥

ऋषिरुवाच ॥२८॥

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः ।
अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥२९॥
भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता ।
प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् ॥३०॥

देव्युवाच ॥३१॥

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ॥३२॥

देवा ऊचुः ॥ ३३ ॥

भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते ॥३४॥
यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ।
यदि चाऽपि वरो देयस्त्वयाऽस्माकं महेश्वरि ! ॥३५॥
संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः ।
यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ॥३६॥
तस्य वित्तर्द्धि-विभवैर्धन-दारादि-सम्पदाम् ।
वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥३७॥

ऋषिरुवाच ॥ ३८ ॥

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः ।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ! ॥३९॥

इत्येतत् कथितं भूप ! सम्भूता सा यथा पुरा ।
देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥४०॥
पुनश्च गौरीदेहात् सा समुद्भूता यथाऽभवत् ।
वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भ-निशुम्भयोः ॥४१॥
रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी ।
तच्छृणुष्वमयाऽऽख्यातं यथावत्कथयामिते ॥ ह्रीँ ॐ ॥४२॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

उवाच ५, अर्धश्लोकौ २, श्लोकाः ३५, एवम् ४२, एवमादितः ॥२५९॥



पञ्चमोऽध्यायः [५]

विनियोगः

ॐ अस्य [1]श्रीउत्तमचरित्रस्य रुद्रऋषिः, महासरस्वती देवता, अनुष्टुप् छन्दः, भीमा शक्तिः, भ्रामरी बीजम्, सूर्यस्तत्त्वम्, सामवेदः स्वरूपम्, महासरस्वती प्रीत्यर्थं उत्तमचरित्रपाठे विनियोगः ।

ध्यानम्

ॐ घण्टा-शूलहलानि शङ्ख-मुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशु-तुल्यप्रभाम्।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादि-दैत्यार्दिनीम् ॥

१. 'श्रीउत्तरचरित्रस्य' इत्यपि पाठः, क्वचित्पुस्तके दृश्यते।

पुरा शुम्भ-निशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः ।
त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबलाश्रयात् ॥ २ ॥
तावेव सूर्यतां तद्वदधिकारं तथैन्दवम् ।
कौबेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च ॥ ३ ॥
तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्निकर्म च ।
ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्टराज्याः पराजिताः ॥ ४ ॥
हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः ।
महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम् ॥ ५ ॥
तयाऽस्माकं वरो दत्तो यथाऽऽपत्सु स्मृताखिलाः ।
भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात् परमापदः ॥ ६ ॥

दु.स.

१०९

इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम् ।
जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः ॥७॥

देवा ऊचुः ॥ ८ ॥

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥९॥
रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥१०॥
कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥११॥
दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥१२॥

अ.
५

१०९

अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः ।

नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ॥१३॥

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।

नमस्तस्यै १४। नमस्तस्यै १५। नमस्तस्यै नमो नमः। १६।

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।

नमस्तस्यै १७। नमस्तस्यै १८। नमस्तस्यै नमो नमः। १९।

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै २०। नमस्तस्यै २१। नमस्तस्यै नमो नमः। २२

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै २३। नमस्तस्यै २४। नमस्तस्यै नमो नमः। २५

दु. स.

१११

या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै २६। नमस्तस्यै २७। नमस्तस्यै नमो नमः। २८
या देवी सर्वभूतेषु च्छायारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै २९। नमस्तस्यै ३०। नमस्तस्यै नमो नमः। ३१
या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ३२। नमस्तस्यै ३३। नमस्तस्यै नमो नमः। ३४
या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ३५। नमस्तस्यै ३६। नमस्तस्यै नमो नमः। ३७
या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ३८। नमस्तस्यै ३९। नमस्तस्यै नमो नमः। ४०

अ.

५

१११

या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ४१। नमस्तस्यै ४२। नमस्तस्यै नमो नमः।४३
या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ४४। नमस्तस्यै ४५। नमस्तस्यै नमो नमः।४६
या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ४७। नमस्तस्यै ४८। नमस्तस्यै नमो नमः।४९
या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ५०। नमस्तस्यै ५१। नमस्तस्यै नमो नमः।५२
या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै ५३। नमस्तस्यै ५४। नमस्तस्यै नमो नमः।५५

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ५६। नमस्तस्यै ५७। नमस्तस्यै नमो नमः।५८।

या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ५९। नमस्तस्यै ६०। नमस्तस्यै नमो नमः ६१।

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ६२। नमस्तस्यै ६३। नमस्तस्यै नमो नमः।६४॥

या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ६५। नमस्तस्यै ६६।। नमस्तस्यै नमोनमः।६७।

या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ६८। नमस्तस्यै ९६। नमस्तस्यै नमो नमः।७०।

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ७१। नमस्तस्यै ७२। नमस्तस्यै नमो नमः ।७३।
या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ७४। नमस्तस्यै ७५। नमस्तस्यै नमो नमः ।७६।
इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः ।७७।
चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् ।
नमस्तस्यै ७८। नमस्तस्यै ७९। नमस्तस्यै नमो नमः ।८०

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्
तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।

करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥८१॥

या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितै-
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते ।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥८२॥

ऋषिरुवाच ॥८३॥

एवं स्तवादियुक्तानां देवानां तत्र पार्वती ।
स्नातुमभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृपनन्दन ॥८४॥
साऽब्रवीत्तान् सुरान् सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का ।
शरीरकोशतश्चास्याः समुद्भूताऽब्रवीच्छिवा ॥८५॥

स्तोत्रं ममैतत् क्रियते शुम्भदैत्यनिराकृतैः ।
देवैः समेतैः समरे निशुम्भेन पराजितैः ॥८६॥
शरीरकोशाद्यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका ।
कौशिकीति समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते ॥८७॥
तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाऽभूत साऽपि पार्वती ।
कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया ॥८८॥
ततोऽम्बिकां परं रूपं बिभ्राणां सुमनोहराम् ।
ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भ-निशुम्भयोः ॥८९॥
ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा ।
काप्यास्ते स्त्री महाराज ! भासयन्ती हिमाचलम् ॥९०॥

दु.श. ११७

नैव तादृक् क्वचिद् रूपं दृष्टं केनचिदुत्तमम् ।
ज्ञायतां काऽप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ! ॥९१॥
स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विषा ।
सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र ! तां भवान् द्रष्टुमर्हति ॥९२॥
यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो ! ।
त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे ॥९३॥
ऐरावतः समानीतो गजरत्नं पुरन्दरात् ।
पारिजाततरुश्चाऽयं तथैवोच्चैःश्रवा हयः ॥९४॥
विमानं हंससंयुक्तमेतत्तिष्ठति तेऽङ्गणे ।
रत्नभूतमिहानीतं यदासीद्वेधसोऽद्भुतम् ॥९५॥

अ० ५

११७

निधिरेष महापद्मः समानीतो धनेश्वरात् ।
किञ्जल्किनीं ददौ चाऽब्धिर्मालामम्लानपङ्कजाम् ॥९६॥
छत्रं ते वारुणं गेहे काञ्चनस्रावि तिष्ठति ।
तथाऽयं स्यन्दनवरो यः पुरासीत् प्रजापतेः ॥९७॥
मृत्योरुत्क्रान्तिदा नाम शक्तिरीश त्वया हृता ।
पाशः सलिलराजस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे ॥९८॥
निशुम्भस्याब्धिजाताश्च समस्ता रत्नजातयः ।
वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी ॥९९॥
एवं दैत्येन्द्र ! रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते ।
स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते ॥१००॥

ऋषिरुवाच ॥ १०१ ॥

निशम्येति वचः शुम्भः स तदा चण्ड-मुण्डयोः ।
प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम् ॥१०२॥
इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम ।
यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु ॥१०३॥
स तत्र गत्वा यत्राऽऽस्ते शैलोद्देशेऽतिशोभने ।
सा देवी तां ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा ॥१०४॥

दूत उवाच ॥१०५॥

देवि ! दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः ।
दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत्सकाशमिहागतः ॥१०६॥

अव्याहताज्ञः सर्वासु यः सदा देवयोनिषु ।
निर्जिताखिलदैत्यारिः स यदाह शृणुष्व तत् ॥१०७॥
मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः ।
यज्ञभागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक् ॥१०८॥
त्रैलोक्ये वररत्नानि मम वश्यान्यशेषतः ।
तथैव [1]गजरत्नं च [2]हृत्वा देवेन्द्रवाहनम् ॥१०९॥
क्षीरोदमथनोद्भूतमश्वरत्नं ममामरैः ।
उच्चैःश्रवससंज्ञं तत् प्रणिपत्य समर्पितम् ॥११०॥
यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च ।
रत्नभूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने ॥१११॥

१. 'गजरत्नानि' । २. 'हृतं' इति पाठान्तरम् । ॥

स्त्रीरत्नभूतां त्वां देवि ! लोके मन्यामहे वयम् ।
सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्नभुजो वयम् ॥११२॥
मां वा ममानुजं वाऽपि निशुम्भमुरुविक्रमम् ।
भज त्वं चञ्चलापाङ्गि ! रत्नभूतासि वै यतः ॥११३॥
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यसे मत्परिग्रहात् ।
एतद् बुद्ध्या समालोच्य मत्परिग्रहतां व्रज ॥११४॥

ऋषिरुवाच ॥११५॥

इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तःस्मिता जगौ ।
दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् ॥११६॥

देव्युवाच ॥११७॥

सत्यमुक्तं त्वया नाऽत्र मिथ्या किञ्चित्त्वयोदितम् ।
त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः ॥ ११८ ॥
किं त्वत्र यत्प्रतिज्ञातं मिथ्या तत्क्रियते कथम् ।
श्रूयतामल्पबुद्धित्वात् प्रतिज्ञा या कृता पुरा ॥ ११९ ॥
यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति ।
यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ॥ १२० ॥
तदाऽऽगच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः ।
मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णातु मे लघु ॥ १२१ ॥

दूत उवाच ॥ १२२ ॥

दु.स.
१२३

अवलिप्तासि मैवं त्वं देवि ! ब्रूहि ममाऽग्रतः ।
त्रैलोक्ये कः पुमांस्तिष्ठेदग्रे शुम्भ-निशुम्भयोः? ॥ १२३ ॥

अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि ।
तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि ! किं पुनः स्त्री त्वमेकिका ? ॥ १२४ ॥

इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे ।
शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि सम्मुखम्? ॥ १२५ ॥

सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः ।
केशाकर्षणनिर्धूतगौरवा मा गमिष्यसि ॥ १२६ ॥

देव्युवाच ॥ १२७ ॥

अ.
५

१२३

एवमेतद् बली शुम्भो निशुम्भश्चातिवीर्यवान् ।
किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा ॥१२८॥

स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत्सर्वमादृतः ।
तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु तत्[1] ॥ॐ॥१२९॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
दूतसंवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

उवाच ९, त्रिपान्मन्त्राः ६६, श्लोकाः ५४, एवम् १२९, एवमादितः ॥३८८॥



१. 'यत्' इति ।

षष्ठोऽध्यायः (६)

ध्यानम्

ॐ नागाधीश्वरविष्टरां फणिफणोत्तंसोरुरत्नावली-
भास्वद् देहलतां दिवाकरनिभां नेत्रत्रयोद्भासिताम् ।
माला-कुम्भ-कपाल-नीरजकरां चन्द्रार्धचूडां परां
सर्वज्ञेश्वरभैरवाङ्कनिलयां पद्मावतीं चिन्तये ॥

'ॐ' ऋषिरुवाच ॥१॥

इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽमर्षपूरितः ।
समाचष्ट समागम्य दैत्यराजाय विस्तरात् ॥ २ ॥

तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यासुरराट् ततः । ८ ॥
सक्रोधः प्राह दैत्यानामधिपं धूम्रलोचनम् ॥ ३ ॥
हे धूम्रलोचनाशु त्वं स्वसैन्यपरिवारितः ।
तामानय बलाद् दुष्टां केशाकर्षणविह्वलाम् ॥ ४ ॥
तत्परित्राणदः कश्चिद् यदि वात्तिष्ठतेऽपरः ।
स हन्तव्योऽमरो वाऽपि यक्षो गन्धर्व एव वा ॥ ५ ॥

ऋषिरुवाच ॥ ६ ॥

तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्रलोचनः ।
वृतः षष्ठ्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ ॥ ७ ॥
स दृष्ट्वा तां ततो देवीं तुहिनाचल-संस्थिताम् ।

जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भ-निशुम्भयोः ॥ ८ ॥
न चेत् प्रीत्याद्य भवती मद्भर्तारमुपैष्यति ।
ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षणविह्वलाम् ॥ ९ ॥

देव्युवाच ॥ १० ॥

दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बलसंवृतः ।
बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् ॥ ११ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १२ ॥

इत्युक्तः सोऽभ्यधावत्तामसुरो धूम्रलोचनः ।
हुङ्कारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः ॥ १३ ॥
अथ क्रुद्धं महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका ।
ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरश्वधैः ॥ १४ ॥

दु. स. १२७ अ० ६ १२७

ततो धुतसटः कोपात् कृत्वा नादं सुभैरवम् ।
पपाताऽसुरसेनायां सिंहो देव्याः स्ववाहनः ॥१५॥
कांश्चित्करप्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान् ।
आक्रान्त्या चाधरेणान्यान् स जघान महासुरान् ॥१६॥
केषांचित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी ।
तथा तलप्रहारेण शिरांसि कृतवान् पृथक् ॥१७॥
विच्छिन्नबाहुशिरसः कृतास्तेन तथापरे ।
पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुतकेशरः ॥१८॥
क्षणेन तद्बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना ।
तेन केसरिणा देव्या वाहनेनातिकोपिना ॥१९॥

श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्रलोचनम् ।
बलं च क्षयितं कृत्स्नं देवीकेसरिणा ततः ॥२०॥

चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिताधरः ।
आज्ञापयामास च तौ चण्ड-मुण्डौ महासुरौ ॥२१॥

हे चण्ड ! हे मुण्ड ! बलैर्बहुभिः[१] परिवारितौ ।
तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु ॥२२॥

केशोष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वः संशयो युधि ।
तदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥२३॥

१. 'बहुलं' इत्यपि पाठः ।

तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते।
शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम्॥ॐ॥२४

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शुम्भ निशुम्भ-
सेनानीधूम्रलोचनवधो नाम षष्ठोऽध्यायः॥ ६ ॥
उवाच ४, श्लोकाः २०, एवम् २४, एवमादितः ४१२ ॥



सप्तमोऽध्यायः [७]

ध्यानम्

ॐ ध्यायेयं रत्नपीठे शुककलपठितं
शृण्वतीं श्यामलाङ्गीं
न्यस्तैकाङ्घ्रिं सरोजे शशिशकलधरां
वल्लकीं वादयन्तीम् ।
कह्लाराबद्धमालां नियमितविलस-
च्चोलिकां रक्तवस्त्रां
मातङ्गीं शङ्खपात्रां मधुरमधुमदां
चित्रकोद्भासिभालाम् ॥

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्ड-मुण्डपुरोगमाः ।
चतुरङ्गबलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः ॥ २ ॥

ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम् ।
सिंहस्योपरि शैलेन्द्रश्रृङ्गे महति काञ्चने ॥ ३ ॥

ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः ।
आकृष्टचापासिधरास्तथाऽन्ये तत्समीपगाः ॥ ४ ॥

ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन् प्रति ।
कोपेन चास्या वदनं [1]मसीवर्णमभूत्तदा ॥ ५ ॥

१. 'मषी' इत्यपि पाठः ।

भ्रुकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद्द्रुतम् ।
काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी ॥ ६ ॥
विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा ।
द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिभैरवा ॥ ७ ॥
अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा ।
निमग्नारक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा ॥ ८ ॥
सा वेगेनाभिपतिता घातयन्ती महासुरान् ।
सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद्बलम् ॥ ९ ॥
पार्ष्णिग्राहाङ्कुश-ग्राहि-योधघण्टा-समन्वितान् ।
समादायैकहस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् ॥१०॥

तथैव योधं तुरगै रथं सारथिना सह ।
निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्यति भैरवम् ॥११॥
एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् ।
पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत् ॥१२॥
तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथाऽसुरैः ।
मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि ॥१३॥
बलिनां तद् बलं सर्वमसुराणां दुरात्मनाम् ।
ममर्दाऽभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाताडयत् तथा ॥१४॥
असिना निहताः केचित् केचित् खट्वाङ्गताडिताः ।
जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभिहतास्तथा ॥१५॥

१.व.
१३५

क्षणेन तद् बलं सर्वमसुराणां निपातितम् ।
दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमतिभीषणाम् ॥१६॥
शरवर्षैर्महाभीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः ।
छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः ॥१७॥
तानि चक्राण्यनेकानि विशमानानि तन्मुखम् ।
बभुर्यथार्कबिम्बानि सुबहूनि घनोदरम् ॥१८॥
ततो जहासातिरुषा भीमं भैरवनादिनी ।
काली करालवक्त्रान्तर्दुर्दर्शदशनोज्ज्वला ॥१९॥
उत्थाय च महासिंहं देवी चण्डमधावत ।
गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् ॥२०॥

अ० ७
१३५

अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
तमप्यपातयद्भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा ॥२१॥
हतशेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
मुण्डं च सुमहावीर्यं दिशो भेजे भयातुरम् ॥२२॥
शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च ।
प्राह प्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् ॥२३॥
मया तवात्रोपहृतौ चण्ड-मुण्डौ महापशू ।
युद्धयज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भं च हनिष्यसि ॥२४॥

ऋषिरुवाच ॥ २५ ॥

तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्ड-मुण्डौ महासुरौ ।

उवाच कालीं कल्याणीं ललितं चण्डिका वचः ॥२६॥

यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता ।

चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि भविष्यसि॥ ॐ॥ २७॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

चण्ड-मुण्डवधो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

उवाच २, श्लोकाः २५, एवम् २७, एवमादितः ४३९॥



अष्टमोऽध्यायः (८)

ध्यानम्

ॐ अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं
धृत-पाशाङ्कुश-बाण-चापहस्ताम् ।
अणिमादिभिरावृतां मयूखै-
रहमित्येव विभावये भवानीम् ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते ।
बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ॥ २ ॥

ततः कोपपराधीनचेताः शुम्भः प्रतापवान् ।
उद्योगं सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह ॥ ३ ॥
अद्य सर्वबलैर्दैत्याः षडशीतिरुदायुधाः ।
कम्बूनां चतुराशीतिर्निर्यान्तु स्वबलैर्वृताः ॥ ४ ॥
कोटिवीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै ।
शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ॥ ५ ॥
कालका दौर्हृदा मौर्याः कालकेयास्तथासुराः ।
युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम ॥ ६ ॥
इत्याज्ञाप्यासुरपतिः शुम्भो भैरवशासनः ।
निर्जगाम महासैन्यसहस्रैर्बहुभिर्वृतः ॥ ७ ॥

आयान्तं चण्डिका दृष्ट्वा तत्सैन्यमतिभीषणम् ।
ज्यास्वनैः पूरयामास धरणीगगनान्तरम् ॥ ८ ॥
ततः सिंहो महानादमतीव कृतवान् नृप ! ।
घण्टास्वनेन तन्नादमम्बिका चोपबृंहयत् ॥ ९ ॥
धनुर्ज्यासिंहघण्टानां नादापूरितदिङ्मुखा ।
निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारितानना ॥ १० ॥
तं निनादमुपश्रुत्य दैत्यसैन्यैश्चतुर्दिशम् ।
देवी सिंहस्तथा काली सरोषैः परिवारिताः ॥ ११ ॥
एतस्मिन्नन्तरे भूप ! विनाशाय सुरद्विषाम् ।
भवायाऽमरसिंहानामतिवीर्य-बलान्विताः ॥ १२ ॥

ब्रह्मेश-गुह-विष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः ।
शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्रूपैश्चण्डिकां ययुः ॥१३॥
यस्य देवस्य यद्रूपं यथाभूषणवाहनम् ।
तद्वदेव हि तच्छक्तिरसुरान् योद्धुमाययौ ॥१४॥
हंसयुक्तविमानाग्रे साक्षसूत्रकमण्डलुः ।
आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधीयते ॥१५॥
माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूलवरधारिणी ।
महाहिवलया प्राप्ता चन्द्ररेखाविभूषणा ॥१६॥
कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना ।
योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुहरूपिणी ॥१७॥

तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरि संस्थिता ।
शङ्ख-चक्र-गदा-शार्ङ्ग-खड्गहस्ताभ्युपाययौ ॥१८॥
यज्ञवाराहमतुलं रूपं या बिभ्रतो हरेः ।
शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं बिभ्रती तनुम् ॥१९॥
नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः ।
प्राप्ता तत्र सटाक्षेप-क्षिप्त-नक्षत्रसंहतिः ॥२०॥
वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरि स्थिता ।
प्राप्ता सहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा ॥२१॥
ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देवशक्तिभिः ।
हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याऽऽह चण्डिकाम् ॥२२॥

ततो देवीशरीरात्तु विनिष्क्रान्तातिभीषणा ।
चण्डिकाशक्तिरत्युग्रा शिवाशतनिनादिनी ॥२३॥
सा चाह धूम्रजटिलमीशानमपराजिता ।
दूत ! त्वं गच्छ भगवन् ! पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः॥ २४॥
ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावतिगर्वितौ ।
ये चाऽन्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥२५॥
त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः ।
यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥२६॥
बलावलेपादथ चेद् भवन्तो युद्धकाङ्क्षिणः ।
तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवाः पिशितेन वः ॥२७॥

यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम् ।
शिवदूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता ॥२८॥
तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः शर्वाख्यातं महासुराः ।
अमर्षापूरिता जग्मुर्यत्र[1] कात्यायनी स्थिता ॥२९॥
ततः प्रथममेवाग्रे शरशक्त्यृष्टिवृष्टिभिः ।
ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः ॥३०॥
सा च तान् प्रहितान् बाणाञ्छूलशक्ति[2] परश्वधान् ।
चिच्छेद लीलयाऽऽध्मात-धनुर्मुक्तैर्महेषुभिः ॥३१॥
तस्याग्रतस्तथा काली शूलपातविदारितान् ।
खट्वाङ्गपोथितांश्चारीन् कुर्वती व्यचरत्तदा ॥३२॥

१. 'यत;' इत्यपि पाठः क्वचित्पुस्तके दृश्यते। २. 'चक्र' इति पाठान्तरम् ।

कमण्डलुजलाक्षेप - हतवीर्यान् हतौजसः ।
ब्रह्माणी चाकरोच्छत्रून् येन येन स्म धावति ॥३३॥
माहेश्वरी त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी ।
दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्यातिकोपना ॥३४॥
ऐन्द्री - कुलिशपातेन शतशो दैत्यदानवाः ।
पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघप्रवर्षिणः ॥३५॥
तुण्डप्रहारविध्वस्ता दंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः ।
वाराहमूर्त्या न्यपतंश्चक्रेण च विदारिताः ॥३६॥
नखैर्विदारितांश्चान्यान् भक्षयन्ती महासुरान् ।
नारसिंही चचाराजौ नादापूर्णदिगम्बरा ॥३७॥

चण्डाऽट्टहासैरसुराः शिवदूत्यभिदूषिताः ।
पेतुः पृथिव्यां पतितांस्तांश्चखादाथ सा तदा ॥३८॥
इति मातृगणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान् ।
दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारिसैनिकाः ॥३९॥
पलायनपरान् दृष्ट्वा दैत्यान् मातृगणार्दितान् ।
योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्तबीजो महासुरः ॥४०॥
रक्तबिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः ।
समुत्पतति मेदिन्यां तत्प्रमाणस्तदासुरः ॥४१॥
युयुधे स गदापाणिरिन्द्रशक्त्या महासुरः ।
ततश्चैन्द्री स्ववज्रेण रक्तबीजमताडयत् ॥४२॥

कुलिशेनाहतस्याशु बहु[1] सुस्राव शोणितम् ।
समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्रूपास्तत्पराक्रमाः ॥४३॥
यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद्रक्तबिन्दवः ।
तावन्तः पुरुषा जातास्तद्वीर्यबलविक्रमाः ॥४४॥
ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्तसम्भवाः ।
समं मातृभिरत्युग्र-शस्त्रपातातिभीषणम् ॥४५॥
पुनश्च वज्रपातेन क्षतमस्य शिरो यदा ।
ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः ॥४६॥
वैष्णवी समरे चैनं चक्रेणाभिजघान ह ।
गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् ॥४७॥

१. 'तस्य' इति ।

वैष्णवीचक्रभिन्नस्य रुधिरस्रावसम्भवैः ।
सहस्रशो जगद्व्याप्तं तत्प्रमाणैर्महासुरैः ॥४८॥
शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथासिना ।
माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्तबीजं महासुरम् ॥४९॥
स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत् पृथक् ।
मातॄः कोपसमाविष्टो रक्तबीजो महासुरः ॥५०॥
तस्याहतस्य बहुधा शक्ति-शूलादिभिर्भुवि ।
पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः ॥५१॥
तैश्चाऽसुरासृक्सम्भूतैरसुरैः सकलं जगत् ।
व्याप्तमासीत्ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम् ॥५२॥

तान् विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा ।
उवाच कालीं चामुण्डे विस्तीर्णं[1] वदनं कुरु ॥५३॥
मच्छस्त्रपातसम्भूतान् रक्तबिन्दून् महासुरान् ।
रक्तबिन्दोः प्रतीच्छ त्वं वक्त्रेणानेन वेगिना ॥५४॥
भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान् महासुरान् ।
एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीणरक्तो गमिष्यति ॥५५॥
भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे ।
इत्युक्त्वा तां ततो देवी शूलेनाभिजघान तम् ॥५६॥
मुखेन काली जगृहे रक्तबीजस्य शोणितम् ॥५७॥

१. 'विस्तरं' इति पुस्तकान्तरे ।

ततोऽसावाजघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम् ।
न चास्या वेदनां चक्रे गदापातोऽल्पिकामपि ॥५८॥

तस्याहतस्य देहात्तु बहु सुस्राव शोणितम् ।
यतस्ततस्तद्वक्त्रेण चामुण्डा सम्प्रतीच्छति ॥५९॥

मुखे समुद्गता येऽस्या रक्तपातान्महासुराः
तांश्चखादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम् ॥६०॥

देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः ।
जघान रक्तबीजं तं चामुण्डापीतशोणितम् ॥६१॥

स पपात महीपृष्ठे शस्त्रसंघसमाहतः ।
नीरक्तश्च महीपाल रक्तबीजो महासुरः ॥६२॥

ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप ! ।
तेषां मातृगणो जातो ननर्तासृङ्मदोद्धतः ॥ॐ॥६३॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

नामाऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

उवाच १, अर्धश्लोकः १, श्लोकाः ६१, एवम् ६३, एवमादितः ॥५०२॥



नवमोऽध्यायः [९]

ध्यानम्

ॐबन्धूककाञ्चननिभं रुचिराक्षमालां
पाशाङ्कुशौ च वरदां निजबाहुदण्डैः ।
बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्र-
मर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि ॥

'ॐ' राजोवाच ॥ १ ॥

विचित्रमिदमाख्यातं भगवन्! भवता मम ।
देव्याश्चरितमाहात्म्यं रक्तबीजवधाश्रितम् ॥ २ ॥

भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्तबीजे निपातिते ।
चकार शुम्भो यत्कर्म निशुम्भश्चाऽतिकोपनः ॥ ३ ॥

ऋषिरुवाच ॥ ४ ॥

चकार कोपमतुलं रक्तबीजे निपातिते ।
शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ॥ ५ ॥
हन्यमानं महासैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन् ।
अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययासुरसेनया ॥ ६ ॥
तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः ।
संदष्टौष्ठपुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥ ७ ॥
आजगाम महावीर्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृतः ।

निहन्तुं चण्डिकां कोपात् कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥ ८ ॥
ततो युद्धमतीवासीद् देव्या शुम्भ-निशुम्भयोः ।
शरवर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः ॥ ९ ॥
चिच्छेदास्ताञ्छरांस्ताभ्यां [१]चण्डिका स्वशरोत्करैः ।
ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ ॥ १० ॥
निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम् ।
अताडयन् मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् ॥ ११ ॥
ताडिते वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम् ।
निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्टचन्द्रकम् ॥ १२ ॥

---

१. 'चण्डिकाऽऽशु' इत्यपि पाठः ।

छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः ।
तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभिमुखागताम् ॥१३॥
कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः ।
[1]आयातं मुष्टिपातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत ॥१४॥
आविध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति ।
साऽपि देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता ॥१५॥
ततः परशुहस्तं तमायान्तं दैत्यपुङ्गवम् ।
आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भूतले ॥१६॥
तस्मिन्निपतिते भूमौ निशुम्भे भीमविक्रमे ।

१. 'आयान्तं' इत्यपि पाठः ।

भ्रातर्यती संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ॥१७॥

स रथास्थस्तथात्युच्चैर्गृहीतपरमायुधैः।
भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ नभः ॥१८॥

तमायान्तं समालोक्य देवी शङ्खमवादयत्।
ज्याशब्दं चापि धनुषश्चकारातीव दुःसहम् ॥१९॥

पूरयामास ककुभो निजघण्टास्वनेन च।
समस्तदैत्यसैन्यानां तेजोवधविधायिना ॥२०॥

ततः सिंहो महानादैस्त्याजितेभ-महामदैः।
पूरयामास गगनं गां तथैव[१] दिशो दश ॥२१॥

१. 'तथोपदिशो' इति।

ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मामताडयत् ।
कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्स्वनास्ते तिरोहिताः ॥२२॥
[1]अट्टाट्टहासमशिवं शिवदूती चकार ह ।
तैः शब्दैरसुरास्त्रेसुः शुम्भः कोपं परं ययौ ॥२३॥
दुरात्मंस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा ।
तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाशसंस्थितैः ॥२४॥
शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालातिभीषणा ।
आयान्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया ॥२५॥
सिंहनादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोकत्रयान्तरम् ।

१. 'अट्टट्ट' इति ग्रन्थान्तरे ।

निर्घातनिःस्वनो घोरो जितवानवनीपते ॥२६॥
शुम्भमुक्ताञ्छरान्देवी शुम्भस्तत्प्रहिताञ्छरान् ।
चिच्छेद स्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥२७॥
ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभिजघान तम् ।
स तदाभिहतो भूमौ मूर्च्छितो निपपात ह ॥२८॥
ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः ।
आजघान शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा ॥२९॥
पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः ।
चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम् ॥३०॥
ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी ।

चिच्छेद तानि चक्राणि स्वशरैः सायकांश्च तान् ॥३१॥
ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम् ।
अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्यसेनासमावृतः ॥३२॥
तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका ।
खड्गेन शितधारेण स च शूलं समाददे ॥३३॥
शूलहस्तं समायान्तं निशुम्भममरार्दनम् ।
हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका ॥३४॥
भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः ।
महाबलो महावीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन् ॥३५॥
तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य स्वनवत्ततः ।

शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद्भुवि ॥३६॥
ततः सिंहश्चखादोग्रं दंष्ट्राक्षुण्णशिरोधरान् ।
असुरांस्तांस्तथा काली शिवदूती तथापरान् ॥३७॥
कौमारीशक्तिनिर्भिन्नाः केचिन्नेशुर्महासुराः ।
ब्रह्माणीमन्त्रपूतेन तोयेनाऽन्ये निराकृताः॥३८॥
माहेश्वरी-त्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथापरे ।
वाराही-तुण्डघातेन केचिच्चूर्णीकृता भुवि ॥३९॥
[1]खडं खडं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः ।
वज्रेण चैन्द्रीहस्ताग्रविमुक्तेन तथापरे ॥४०॥

१. 'खण्डखण्डं' इति ।

केचिद् विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् ।
भक्षिताश्चापरे कालीशिवदूतीमृगाधिपैः ॥ॐ॥४१॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
निशुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

उवाच २, श्लोकाः ३९, एवम् ४१,
एवमादितः ॥ ५४३ ॥



दशोऽध्यायः (१०)

ध्यानम्

'ॐ' उत्तप्तहेमरुचिरां रविचन्द्रवह्नि-
नेत्रां धनुश्शरयुताङ्कुश-पाश-शूलम्।
रम्यैर्भुजैश्च दधतीं शिवशक्तिरूपां
कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दुलेखाम् ॥

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राणसम्मितम्।
हन्यमानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद् वचः ॥२॥

बलावलेपाद् दुष्टे त्वं मा दुर्गे गर्वमावह ।
अन्यासां बलमाश्रित्य युद्ध्यसे यातिमानिनी ॥३॥

देव्युवाच ॥ ४ ॥

एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा ।
पश्यैता दुष्ट मय्येव विशन्त्यो मद्विभूतयः ॥५॥
ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणीप्रमुखालयम् ।
तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत्तदाम्बिका ॥६॥

देव्युवाच ॥ ७ ॥

अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदास्थिता ।
तत्संहृतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव ॥८॥

ऋषिरुवाच ॥ ९ ॥

ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः ।
पश्यतां सर्वदेवानामसुराणां च दारुणम् ॥१०॥
शरवर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथाऽस्त्रैश्चैव दारुणैः ।
तयोर्युद्धमभूद् भूयः सर्वलोकभयङ्करम् ॥११॥
दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका ।
बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीघातकर्तृभिः ॥१२॥
मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी ।
बभञ्ज लीलयैवोग्र-हुङ्कारोच्चारणादिभिः ॥१३॥
ततः शरशतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः ।
साऽपि तत्कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः ॥१४॥

दु. स. १६५

छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे ।
चिच्छेद देवी चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम् ॥१५॥

अ० १०

ततः खड्गमुपादाय शतचन्द्रं च भानुमत् ।
अभ्यधावत्तदा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः ॥१६॥
तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका ।
धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम् ॥१७॥
हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः ।
जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिकानिधनोद्यतः ॥१८॥
चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः ।
तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान् ॥१९॥

स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुङ्गवः ।
देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत् ॥२०॥
तलप्रहाराभिहतो निपपात महीतले ।
स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥२१॥
उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः ।
तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका ॥२२॥
नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् ।
चक्रतुः प्रथमं [१]सिद्धमुनिविस्मयकारकम् ॥२३॥
ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह ।
उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणीतले ॥२४॥

१. 'युद्धं' इति ।

स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य [1]वेगितः ।
अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिकानिधनेच्छया ॥ २५ ॥
तमायान्तं ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम् ।
जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि ॥ २६ ॥
स गतासुः पपातोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः ।
चालयन् सकलां पृथ्वीं साब्धिद्वीपां सपर्वताम् ॥ २७ ॥
ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन् दुरात्मनि ।
जगत्स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाऽभवन्नभः ॥ २८ ॥
उत्पातमेघाः सोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः ।
सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासंस्तत्र पातिते ॥ २९ ॥

१. 'वेगवान्' इति ।

ततो देवगणाः सर्वे हर्षनिर्भरमानसाः ।
बभूवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः ॥३०॥
अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।
ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद् दिवाकरः ॥३१॥
जज्वलुश्चाग्नयःशान्ताःशान्ता दिग्जनितस्वनाः ॐ ॥३२॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

शुम्भवधो नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

उवाच ४, अर्धश्लोकः १, श्लोकाः २७, एवम् ३२, एवमादितः ॥५७५॥

★

एकादशोऽध्यायः (११)

ध्यानम्

ॐ बालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां
तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुश-पाशा-
भीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ॥

'ॐ' ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे
सेन्द्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम् ।

कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टलाभाद्
विकाशि-वक्त्राब्ज[1] -विकाशिताशाः ॥२॥
देवि ! प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि ! पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि ! चराऽचरस्य ॥३॥
आधारभूता जगतस्त्वमेका
महीस्वरूपेण यतः स्थितासि ।
अपां स्वरूपस्थितया त्वयैत-
दाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये ! ॥४॥

१. वक्त्रास्तु' इति पाठान्तरम् ।

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया।
सम्मोहितं देवि ! समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥ ५ ॥
विद्याः समस्तास्तव देवि ! भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ? ॥ ६ ॥
सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥ ७ ॥

सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते ।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥
कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि ।
विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये[1] शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥
सृष्टि-स्थिति-विनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥
शरणागत - दीनार्त - परित्राण - परायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥

१. 'मङ्गल्ये' इति पाठान्तरम् ।

हंसयुक्त-विमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि ।
कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१३॥
त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि ।
माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१४॥
मयूर-कुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे ।
कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१५॥
शङ्ख-चक्र-गदा-शार्ङ्ग-गृहीत-परमायुधे ! ।
प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१६॥
गृहीतोग्र-महाचक्रे ! दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरे ! ।
वराहरूपिणि शिवे नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१७॥

नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे ।
त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१८॥
किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले ।
वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१९॥
शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले ।
घोररूपे महारावे नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥२०॥
दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे ।
चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥२१॥
लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टिस्वधे ध्रुवे ।
महारात्रि महाविद्ये नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥२२॥

मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि ।
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥२३॥
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते ॥२४॥
एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम् ।
पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि ! नमोऽस्तु ते ॥२५॥
ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि ! नमोऽस्तु ते ॥२६॥
हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि ! पापेभ्योऽनः सुतानिव ॥२७॥

असुरासृग-वसा-पङ्क-चर्चितस्ते करोज्ज्वलः ।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम् ॥२८॥

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥२९॥

एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाऽद्य
धर्मद्विषां देवि ! महासुराणाम् ।
रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्मूर्तिं
कृत्वाऽम्बिके तत्प्रकरोति काऽन्या ॥३०॥

विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपे-
ष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या ।
ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे
विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥३१॥
रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा
यत्राऽरयो दस्युबलानि यत्र ।
दावानलो यत्र तथाऽब्धिमध्ये
तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥३२॥
विश्वेश्वरि ! त्वं परिपासि विश्वं
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम् ।

विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥३३॥
देवि ! प्रसीद परिपालय नोऽरिभीते-
र्नित्यं यथाऽसुरवधादधुनैव सद्यः ।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाऽऽशु
उत्पात-पाक-जनितांश्च महोपसर्गान् ॥३४॥
प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि ।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥३५॥

देव्युवाच ॥ ३६ ॥

वरदाऽहं सुरगणा वरं यन्मनसेच्छथ ।
तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥३७॥

दु.स. १७९

देवा ऊचुः ॥ ३८ ॥

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याऽखिलेश्वरि ! ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥३९॥

देव्युवाच ॥ ४० ॥

वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे ।
शुम्भो निशुम्भश्चैवाऽन्यावुत्पत्स्येते महासुरौ ॥४१॥
नन्दगोपगृहे[1] जाता यशोदागर्भसम्भवा ।
ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचलनिवासिनी ॥४२॥
पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले ।
अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥४३॥

अ. ११ १७९

१. 'कुले' इत्यपि पाठ ।

भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान् महासुरान् ।
रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः ॥४४॥
ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवाः ।
स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदन्तिकाम् ॥४५॥
भूयश्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि ।
मुनिभिः संस्तुता भूमौ सम्भविष्याम्ययोनिजा ॥४६॥
ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् ।
कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः ॥४७॥
ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः ॥
भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राणधारकैः ॥४८॥

शाकम्भरीति विख्यातिं तदा यास्याम्यहं भुवि ।
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम् ॥४९॥
दुर्गा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
पुनश्चाऽहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले ॥५०॥
रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राणकारणात् ।
तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तयः ॥५१॥
भीमा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति ॥५२॥
तदाऽहं भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येयषट्पदम् ।
त्रैलोक्यस्य हितार्थाय वधिष्यामि महासुरम् ॥५३॥

भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः ।
इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ॥५४॥
तदा तदाऽवतीर्याऽहं करिष्याम्यरिसंक्षयम् ॥ॐ॥५५॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
देव्याः स्तुतिर्नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥
उवाच ४, अर्धश्लोकाः ५०, एवम् ५५, एवमादितः ६३० ॥



द्वादशोऽध्यायः (१२)

ध्यानम्

ॐ विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदाऽसखेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

'ॐ' देव्युवाच ॥ १ ॥

एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः ।
तस्याऽहं सकलां बाधां नाशयिष्याम्यसंशयम् ॥ २ ॥
मधु कैटभनाशं च महिषासुरघातनम् ।
कीर्तयिष्यन्ति ये तद्वद् वधं शुम्भ-निशुम्भयोः ॥ ३ ॥

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः ।
श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम् ॥ ४ ॥
न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद् दुष्कृतोत्था न चापदः ।
भविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम् ॥ ५ ॥
शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः ।
न शस्त्रानलतोयौघात् कदाचित् सम्भविष्यति ॥ ६ ॥
तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहितैः ।
श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत् ॥ ७ ॥
उपसर्गानशेषांस्तु महामारीसमुद्भवान् ।
तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ॥ ८ ॥

यत्रैतत् पठ्यते सम्यङ्नित्यमायतने मम ।
सदा न तद्विमोक्ष्यामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् ॥ ९ ॥
बलिप्रदाने पूजायामग्निकार्यें महोत्सवे ।
सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च ॥१०॥
जानताऽजानता वाऽपि बलिपूजां तथा कृताम् ।
प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्निहोमं तथा कृतम् ॥११॥
शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी ।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्तिसमन्वितः ॥१२॥
सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धन-धान्य-सुतान्वितः ।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥१३॥

श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः ।
पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् ॥१४॥
रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोपपद्यते ।
नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम् ॥१५॥
शान्तिकर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्नदर्शने ।
ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम ॥१६॥
उपसर्गाः शमं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः ।
दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते ॥१७॥
बालग्रहाभिभूतानां बालानां शान्तिकारकम् ।
सङ्घातभेदे च नृणां मैत्रीकरणमुत्तमम् ॥१८॥

दु. स.
१८७

दुर्वृत्तानामशेषाणां बलहानिकरं परम् ।
रक्षो-भूत-पिशाचानां पठनादेव नाशनम् ॥१९॥
सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधिकारकम् ।
पशु-पुष्पा-ऽर्घ्य-धूपैश्च गन्ध-दीपैस्तथोत्तमैः ॥२०॥
विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम् ।
अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या ॥२१॥
प्रीतिर्मे क्रियते साऽस्मिन् सुकृत्सुचरिते श्रुते ।
श्रुतं हरति पापानि तथाऽऽरोग्यं प्रयच्छति ॥२२॥
रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम ।
युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्टदैत्य-निबर्हणम् ॥२३॥

अ० १२
१८७

तस्मिन्ङ्कृते वैरिकृतं भयं पुंसां न जायते ।
युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः ॥ २४ ॥
ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम् ।
अरण्ये प्रान्तरे वाऽपि दावाग्नि-परिवारितः ॥ २५ ॥
दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वाऽपि शत्रुभिः ।
सिंह-व्याघ्रानुयातो वा वने वा वनहस्तिभिः ॥ २६ ॥
राज्ञा क्रुद्धेन चाऽऽज्ञप्तो वध्यो बन्धगतोऽपि वा ।
आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे ॥ २७ ॥
पतत्सु चाऽपि शस्त्रेषु संग्रामे भृशदारुणे ।
सर्वाबाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा ॥ २८ ॥

स्मरन् ममैतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्कटात् ।
मम प्रभावात् सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा ॥२९॥
दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम ॥३०॥

ऋषिरुवाच ॥ ३१ ॥

इत्युक्त्वा सा भगवती चण्डिका चण्डविक्रमा ॥३२॥
पश्यतामेव देवानां तत्रैवाऽन्तरधीयत ।
तेऽपि देवा निरातङ्काः स्वाधिकारान् यथा पुरा ॥३३॥
यज्ञभागभुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः ।
दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देवरिपौ युधि ॥३४॥

जगद्-विध्वंसिनि तस्मिन् महोग्रेऽतुलविक्रमे ।
निशुम्भे च महावीर्ये शेषाः पातालमाययुः ॥३५॥
एवं भगवती देवी सा नित्याऽपि पुनः पुनः ।
सम्भूय कुरुते भूप! जगतः परिपालनम् ॥३६॥
तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते ।
सा याचिता च विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति ॥३७॥
व्याप्तं तयैतत् सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर! ।
महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरूपया ॥३८॥
सैव काले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा ।
स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ॥३९॥

भवकाले नृणां सैव लक्ष्मीर्वृद्धिप्रदा गृहे ।
सैवाभावे तथाऽलक्ष्मीर्विनाशायोपजायते ॥४०॥
स्तुता सम्पूजिता पुष्पैर्धूप-गन्धादिभिस्तथा ।
ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे गतिं शुभाम् ॥ॐ॥४१॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
फलस्तुतिर्नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

उवाच २, अर्धश्लोकौ: २, श्लोका: ३७, एवं ४१,
एवमादितः ६७१ ।



त्रयोदशोऽध्यायः [१३]

ध्यानम्

ॐ बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।
पाशाङ्कुश-वरा-भीतीर्धारयन्तीं शिवां भजे ॥

'ॐ' ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

एतत्ते कथितं भूप ! देवीमाहात्म्यमुत्तमम् ।
एवंप्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत् ॥२॥
विद्या तथैव क्रियते भगवद्विष्णुमायया ।
तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवाऽन्ये विवेकिनः ॥ ॥

मोहन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चाऽपरे ।
तामुपैहि महाराज ! शरणं परमेश्वरीम् ॥ ४ ॥
आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा ॥ ५ ॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ ६ ॥

इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः ॥ ७ ॥
प्रणिपत्य महाभागं तमृषिं शंसितव्रतम् ।
निर्विण्णोऽतिममत्वेन राज्यापहरणेन च ॥ ८ ॥
जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने ! ।
संदर्शनार्थमम्बाया नदीपुलिनसंस्थितः ॥ ९ ॥
स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तं परं जपन् ।

तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम् ॥ १० ॥
अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्प-धूपा-ऽग्नितर्पणैः ।
निराहारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ ॥ ११ ॥
ददतुस्तौ बलिं चैव निजगात्रासृगुक्षितम् ।
एवं समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः ॥ १२ ॥
परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका ॥ १३ ॥

देव्युवाच ॥ १४ ॥

यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप ! त्वया च कुलनन्दन ! ।
मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत् ॥ १५ ॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ १६ ॥

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि ।

अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात् ॥१७॥
सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्णमानसः ।
ममेत्यहमिति प्राज्ञः सङ्गविच्युतिकारकम् ॥१८॥

देव्युवाच ॥ १९ ॥

स्वल्पैरहोभिर्नृपते स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् ॥२०॥
हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ॥२१॥
मृतश्च भूयः सम्प्राप्य जन्म देवाद् विवस्वतः ॥२२॥
सावर्णिको नाम मनुर्भवान् भुवि भविष्यति ॥२३॥
वैश्यवर्य ! त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभिवाञ्छितः ॥२४॥
तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानं भविष्यति ॥२५॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ २६ ॥

इति दत्त्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् ॥२७॥
बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता ।
एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ॥२८॥
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः ॥२९॥
एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ।
सूर्याज्जन्म समासाद्य सार्णिर्भविता मनुः ॥ क्लीं ॐ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सुरथ-
वैश्ययोर्वरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

उवाच ६, अर्धश्लोकाः ११, श्लोकाः १२, एवम् २९, एवमादितः ७०० ।
समस्ता उवाचमन्त्राः ५७, अर्द्धश्लोकाः ४२,
श्लोकाः ५३५, अवदानानि ६६ ॥

हृदयादिन्यासः

खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शङ्खिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी-परिघायुधा ॥ हृदयाय नमः ।
शूलेन पाहि नो देवि ! पाहि खड्गेन चाऽम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चाप-ज्या-निःस्वनेन च ॥ शिरसे स्वाहा ।
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ! ॥ शिखायै वषट् ।
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चाऽत्यर्थघोराणि तै रक्षाऽस्मांस्तथा भुवम् ॥ कवचाय हुम् ।
खड्ग-शूल-गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ नेत्रत्रयाय वौषट् ।

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति-समन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि ! दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते ॥ अस्त्राय फट् ॥

इत्युत्तरन्यासः ।

ध्यानम्

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपति-स्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवालखेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदा-ऽसि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तम्

विनियोगः—ॐ अहमित्यष्टर्चस्य सूक्तस्य वागाम्भृणी ऋषिः, सच्चित्सुखात्मकः, सर्वगतः परमात्मा देवता, द्वितीयाया ऋचो जगती, शिष्टानां त्रिष्टुप् छन्दः, देवीमाहात्म्यपाठे विनियोगः ॥

सिंहस्था शशिशेखरा मरकत-प्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः
शङ्खं चक्र-धनुः-शरांश्च दधतो नेत्रै-स्त्रिभिः शोभिता।
आमुक्ताङ्गद-हार-कङ्कण-रणत्-काञ्ची-रणन्नूपुरा
दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्-कुण्डला॥

ॐ अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा॥१॥
अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम्।
अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये१ यजमानाय सुन्वते॥२॥
अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्।
तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम्॥३॥

मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम् ।
अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि ॥४॥
अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः ।
यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥५॥
अहं रुद्राय धनुरा तनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ ।
अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आ विवेश ॥६॥
अहं सुवे पितरमस्य मूर्द्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे ।
ततो वितिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोपस्पृशामि ॥७॥
अहमेव वात इव प्रवाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा ।
परो दिवापर एना पृथिव्यैतावती महिना संबभूव ॥८॥

[ऋ० मं० १०, सूक्त १२५, मं० १-८, अ० ७]

इति ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तं समाप्तम् ।



तन्त्रोक्तं देवीसूक्तम्

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ १ ॥

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥ २ ॥

कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥ ३ ॥

दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥ ४ ॥

अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः । ४॥
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ॥५॥
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥६॥
या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥७॥
या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥८॥
या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमोः ॥९॥

या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१०॥
या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥११॥
या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१२॥
या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१३॥
या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१४॥

या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१५॥
या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१६॥
या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१७॥
या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१८॥
या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१९॥

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२०॥
या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२१॥
या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२२॥
या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२३॥
या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२४॥

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२५॥
या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२६॥
इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाऽखिलेषु या ।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः ॥२७॥
चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमो नमः ॥२८॥

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्
तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।

करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥२९॥
या साम्प्रतं चौद्धत-दैत्य-तापितै-
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्ति-विनम्र-मूर्तिभिः ॥३०॥

इति तन्त्रोक्तं देवीसूक्तं समाप्तम्।

तत्पश्चाद् देवीसूक्तस्य पाठं कृत्वाऽष्टोत्तरशतसङ्ख्याकं 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इति नवार्णमन्त्रं जपेत्। तदनन्तरं 'गुह्याऽति-गुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणाऽस्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि! त्वत्प्रसादान्महेश्वरि! ॥' इति पठित्वा देव्या वामहस्ते जपं निवेदयेत्। ततः सप्तशतीरहस्यत्रयं पठेत्।

प्राधानिकं रहस्यम्

विनियोगः—अस्य श्रीसप्तशतीरहस्यत्रयस्य नारायण ऋषिरनुष्टुप्छन्दः, महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः, यथोक्तफलाऽवाप्त्यर्थं जपे विनियोगः ।

राजोवाच

भगवन्नवतारा मे चण्डिकायास्त्वयोदिताः ।
एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन् ! प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥
आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन च द्विज !
विधिना ब्रूहि सकलं यथावत् प्रणतस्य मे ॥ २ ॥

ऋषिरुवाच

इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते ।
भक्तोऽसीति न मे किञ्चित् तवाऽवाच्यं नराधिप !॥ ३ ॥

सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी ।
लक्ष्याऽलक्ष्यस्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता ॥४॥
मातुलिङ्गं गदां खेटं पानपात्रं च बिभ्रती ।
नागं लिङ्गं च योनिं च बिभ्रती नृप मूर्द्धनि ॥५॥
तप्तकाञ्चनवर्णाभा तप्तकाञ्चनभूषणा ।
शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ॥६॥
शून्यं तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी ।
बभार परमं रूपं तमसा केवलेन हि ॥७॥
सा भिन्नाञ्जनसंकाशा दंष्ट्राङ्कितवरानना ।
विशाललोचना नारी बभूव तनुमध्यमा ॥८॥

खड्गपात्रशिरः खेटैरलङ्कृतचतुर्भुजा ।
कबन्धहारं शिरसा बिभ्राणा हि शिरःस्रजम् ॥९॥
सा प्रोवाच महालक्ष्मीं तामसी प्रमदोत्तमा ।
नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यं नमो नमः ॥१०॥
तां प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ।
ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि ते ॥११॥
महामाया महाकाली महामारी क्षुधा तृषा ।
निद्रा तृष्णा चैकवीरा कालरात्रिर्दुरत्यया ॥१२॥
इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः ।
एभिः कर्माणि ते ज्ञात्वा योऽधीते सोऽश्नुते सुखम् ॥१३॥

तामित्युक्त्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप ।
सत्त्वाख्येनातिशुद्धेन गुणेनेन्दुप्रभं दधौ ॥१४॥
अक्षमालाङ्कुशधरा वीणा-पुस्तकधारिणी ।
सा बभूव वरा नारी नामान्यस्यै च सा ददौ ॥१५॥
महाविद्या महावाणी भारती वाक् सरस्वती ।
आर्या ब्राह्मी कामधेनुर्वेदगर्भा च धीश्वरी ॥१६॥
अथोवाच महालक्ष्मीर्ममहाकालीं सरस्वतीम् ।
युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ॥१७॥
इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् ।
हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ कमलासनौ ॥१८॥

ब्रह्मन् विधे विरिञ्चेति धातरित्याह तं नरम् ।
श्रीःपद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता च तां स्त्रियम् ॥१९॥
महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह ।
एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि ते ॥२०॥
नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेताङ्गं चन्द्रशेखरम् ।
जनयामास पुरुषं महाकाली सितां स्त्रियम् ॥२१॥
स रुद्रः शङ्करः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः ।
त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा ॥२२॥
सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप ।
जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥२३॥

विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः ।
उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शिवा ॥२४॥
एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे ।
चक्षुष्मन्तो नु पश्यन्ति नेतरेऽतद्विदो जनाः ॥२५॥
ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मीर्नृप त्रयीम् ।
रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम् ॥२६॥
स्वरया सह सम्भूय विरिञ्चोऽण्डमजीजनत् ।
बिभेद भगवान् रुद्रस्तद् गौर्या सह वीर्यवान् ॥२७॥
अण्डमध्ये प्रधानादि कार्यजातमभून्नृप ।
महाभूतात्मकं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥२८॥

पुपोष पालयामास तल्लक्ष्म्या सह केशवः ।
संजहार जगत्सर्वं सह गौर्या महेश्वरः ॥२९॥
महालक्ष्मीर्महाराज सर्वसत्त्वमयीश्वरी ।
निराकारा च साकारा सैव नानाभिधानभृत् ॥३०॥
नानान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन केनचित्॥ॐ॥३१॥

इति प्राधानिकरहस्यं समाप्तम् ।

वैकृतिकं रहस्यम्

ऋषिरुवाच

ॐत्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी या त्रिधोदिता ।
सा सर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥ १ ॥

दु. स.
२१५

योगनिद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा ।
मधुकैटभनाशार्थं या तुष्टावाम्बुजासनः ॥ २ ॥
दशवक्त्रा दशभुजा दशपादाञ्जनप्रभा ।
विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया ॥ ३ ॥
स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा भीमरूपाऽपि भूमिप ! ।
रूप-सौभाग्य-कान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियः ॥ ४ ॥
खड्ग-बाण-गदा-शूल-चक्र-शङ्ख-भुशुण्डिभृत ।
परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद्रुधिरं दधौ ॥ ५ ॥
एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया ।
आराधिता वशीकुर्यात् पूजाकर्तुश्चराऽचरम् ॥ ६ ॥

वै.र.
२१५

सर्वदेवशरीरेभ्यो याऽऽविर्भूतामितप्रभा ।
त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी ॥ ७ ॥
श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमण्डला ।
रक्तमध्या रक्तपादा नीलजङ्घोरुरुन्मदा ॥ ८ ॥
सुचित्रजघना चित्रमाल्याम्बरविभूषणा ।
चित्रानुलेपना कान्तिरूप-सौभाग्य-शालिनी ॥ ९ ॥
अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती ।
आयुधान्यत्र वक्ष्यन्ते दक्षिणाधःकरक्रमात् ॥ १० ॥
अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा ।
चक्रं त्रिशूलं परशुः शङ्खो घण्टा च पाशकः ॥ ११ ॥

शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पानपात्रं कमण्डलुः ।
अलङ्कृतभुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥१२॥
सर्वदेवमयीमीशां महालक्ष्मीमिमां नृप ! ।
पूजयेत् सर्वलोकानां स देवानां प्रभुर्भवेत् ॥१३॥
गौरीदेहात् समुद्भूता या सत्त्वैकगुणाश्रया ।
साक्षात् सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥१४॥
दधौ चाऽष्टभुजा बाण मुसले शूलचक्रभृत् ।
शङ्खं घण्टां लाङ्गलं च कार्मुकं वसुधाधिप ॥१५॥
एषा सम्पूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति ।
निशुम्भमथिनी देवी शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥१६॥

इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव ।
उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥१७॥
महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महाकाली सरस्वती ।
दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुनत्रयम् ॥१८॥
विरञ्चिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या न दक्षिणे ।
वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवतात्रयम् ॥१९॥
अष्टादशभुजा मध्ये वामे चास्या दशानना ।
दक्षिणेऽष्टभुजा लक्ष्मीर्महतीति समर्चयेत् ॥२०॥
अष्टादशभुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप ।
दशानना चाऽष्टभुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥२१॥

कालमृत्यू च सम्पूज्यौ सर्वारिष्टप्रशान्तये ।
यदा चाऽष्टभुजा पूज्या शुम्भासुर निबर्हिणी ॥२२॥
नवास्याः शक्तयः पूज्यास्तदा रुद्रविनायकौ ।
नमो देव्या इति स्तोत्रैर्महालक्ष्मीं समर्चयेत् ॥२३॥
अवतारत्रयार्चायां स्तोत्रमन्त्रास्तदाश्रयाः ।
अष्टादशभुजा चैषा पूज्या महिषमर्दिनी ॥२४॥
महालक्ष्मीर्महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती ।
ईश्वरो पुण्यपापानां सर्वलोकमहेश्वरी ॥२५॥
महिषान्तकरो येन पूजिता स जगत्प्रभुः ।
पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ॥२६॥

अर्घ्यादिभिरलङ्कारैर्गगन्ध पुष्पैस्तथाऽक्षतैः ।
धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्यसमन्वितैः ॥२७॥
रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप ।
(बलिमांसादिपूजेयं विप्रवर्ज्या मयेरिता ॥
तेषां किल सुरामांसैर्नोक्ता पूजा नृप क्वचित् ।)
प्रणामाचमनीयेन चन्दनेन सुगन्धिना ॥२८॥
सकर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भक्तिभावसमन्वितैः ।
वामभागेऽग्रतो देव्याश्छिन्नशीर्षं महासुरम् ॥२९॥
पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीशया ।
दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥३०॥

वाहनं पूजयेद् देव्या धृतं येन चराऽचरम् ।
कुर्याच्च स्तवनं धीमांस्तस्या एकाग्रमानसः ॥३१॥
ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः ।
एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ॥३२॥
चारितार्धं तु न जपेज्जपञ्छिद्रमवाप्नुयात् ।
प्रदक्षिणा-नमस्कारान् कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ॥३३॥
क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः ।
प्रतिश्लोकं च जुहुयात् पायसं तिल-सर्पिषा ॥३४॥
जुहुयात् स्तोत्रमन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः ।
भूयो नामपदैर्देवीं पूजयेत् सुसमाहितः ॥३५॥

प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्वः प्रणम्यारोप्य चात्मनि ।
सुचिरं भावयेदीशां चण्डिकां तन्मयो भवेत् ॥३६॥
एवं यः पूजयेद् भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् ।
भुक्त्वा भोगान् यथाकामं देवीसायुज्यमाप्नुयात् ॥३७॥
यो न पूजयते नित्यं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ।
भस्मीकृत्याऽस्य पुण्यानि निर्दहेत् परमेश्वरी ॥३८॥
तस्मात् पूजय भूपाल ! सर्वलोकमहेश्वरीम् ।
यथोक्तेन विधानेन चण्डिकां सुखमाप्स्यसि ॥३९॥

इति वैकृतिकं रहस्यं सम्पूर्णम् ।

मूर्तिरहस्यम्

ऋषिरुवाच

ॐ नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा ।
स्तुता सा पूजिता भक्त्या वशीकुर्याज्जगत्त्रयम्॥ १ ॥
कनकोत्तमकान्तिः सा सुकान्तिकनकाम्बरा ।
देवी कनकवर्णाभा कनकोत्तमभूषणा ॥ २ ॥
कमलाङ्कुश-पाशाब्जैरलङ्कृत-चतुर्भुजा ।
इन्दिरा कमला लक्ष्मीः सा श्री रुक्माम्बुजासना ॥ ३ ॥
या रक्तदन्तिका नाम देवी प्रोक्ता मयाऽनघ ।
तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्वभयापहम् ॥ ४ ॥

रक्ताम्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वाङ्गभूषणा ।
रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्तकेशातिभीषणा ॥ ५ ॥
रक्ततीक्ष्णनखा रक्तदशना रक्तदन्तिका ।
पतिं नारीवानुरक्ता देवी भक्तं भजेज्जनम् ॥ ६ ॥
वसुधेव विशाला सा सुमेरुयुगलस्तनी ।
दीर्घौ लम्बावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ ॥ ७ ॥
कर्कशावतिकान्तौ तौ सर्वानन्दपयोनिधी ।
भक्तान् सम्पादयेद् देवी सर्वकामदुघौ स्तनौ ॥ ८ ॥
खड्गं पात्रं च मुसलं लाङ्गलं च बिभर्ति सा ।
आख्याता रक्तचामुण्डा देवी योगेश्वरीति च ॥ ९ ॥

दु. स. २२५

अनया व्याप्तमखिलं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।
इमां यः पूजयेद् भक्त्या स व्याप्नोति चराऽचरम् ॥ १० ॥
(भुक्त्वा भोगान् यथाकामं देवीसायुज्यमाप्नुयात्)
अधीते य इमं नित्यं रक्तदन्त्या वपुस्तवम् ।
तं सा परिचरेद् देवी पतिं प्रियमिवाङ्गना ॥ ११ ॥
शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पलविलोचना ।
गम्भीरनाभिस्त्रिवली-विभूषित-तनूदरी ॥ १२ ॥
सुकर्कश-समोत्तुङ्ग-वृत्तपीन-घनस्तनी ।
मुष्टिं शिलीमुखापूर्णं कमलं कमलालया ॥ १३ ॥
पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्यं शाकसञ्चयम् ।

मू. र. २२५ १५

काम्यानन्तरसैर्युक्तं क्षुत्तृण्मृत्युभयापहम् ॥१४॥
कार्मुकं च स्फुरत्कान्ति बिभ्रती परमेश्वरी ।
शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ॥१५॥
विशोका दुष्टदमनी शमनी दुरितापदाम् ।
उमा गौरी सती चण्डी कालिका सा च पार्वती ॥१६॥
शाकम्भरीं स्तुवन् ध्यायञ्जपन् सम्पूजयन्नमन् ।
अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्नपानामृतं फलम् ॥१७॥
भीमापि नीलवर्णा सा दंष्ट्रादशनभासुरा ।
विशाललोचना नारी वृत्तपीनपयोधरा ॥१८॥
चन्द्रहासं च डमरुं शिरः पात्रं च बिभ्रती ।

एकवीरा कालरात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता ॥१९॥
तेजोमण्डलदुर्धर्षा भ्रामरी चित्रकान्तिभृत् ।
चित्रानुलेपना देवी चित्राभरणभूषिता ॥२०॥
चित्रभ्रमरपाणिः सा महामारीति गीयते ।
इत्येता मूर्तयो देव्या याः ख्याता वसुधाधिप ॥२१॥
जगन्मातुश्चण्डिकायाः कीर्तिताः कामधेनवः ।
इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित्त्वया ॥२२॥
व्याख्यानं दिव्यमूर्तीनामभीष्टफलदायकम् ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन देवीं जप निरन्तरम् ॥२३॥
सप्तजन्मार्जितैर्घोरैर्ब्रह्महत्यासमैरपि ।

पाठमात्रेण मन्त्राणां मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥२४॥
देव्या ध्यानं मयाऽऽख्यातं गुह्याद् गुह्यतरं महत् ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वकामफलप्रदम् ॥२५॥
(एतस्यास्त्वं प्रसादेन सर्वमान्यो भविष्यति ।)
सर्वरूपमयी देवी सर्वं देवीमयं जगत् ।
अतोऽहं विश्वरूपां तां नमामि परमेश्वरीम् ॥२६॥

इति मूर्तिरहस्यं सम्पूर्णम् ।

यदत्र पाठे जगदम्बिके ! मया
विसर्ग - बिन्द्वक्षर - हीनमीरितम् ।
तदस्तु सम्पूर्णतमं प्रसादतः
सङ्कल्पसिद्धिश्च सदैव जायताम् ॥ १ ॥
मोहादज्ञानतो वा पठितमपठितं
साम्प्रतं ते स्तवेऽस्मिन् ।
तत्सर्वं साङ्गमास्तां भगवति वरदे !
त्वत्प्रसादात् प्रसीद ! ॥ २ ॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि ! ॥ ३ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि ! ।
यत्पूजितं मया देवि ! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ४ ॥

अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत् ।
यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ॥ ५ ॥
सापराधोऽस्मि शरणं प्राप्तस्त्वां जगदम्बिके ! ।
इदानीमनुकम्प्योऽहं यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ६ ॥
कामेश्वरि ! जगन्मातः सच्चिदानन्दविग्रहे ।
गृहाणार्चामिमां प्रीत्या प्रसीद परमेश्वरि ! ॥ ७ ॥

नवचण्डी-शतचण्डी-सहस्रचण्डी-लक्षचण्डी-हवनप्रयोगः

ततः पाठसमाप्तौ कृतयां पाठदशांशं हवनं तद्दशांशतर्पणं तद्द-शांशमार्जनं मार्जनदशांश-ब्राह्मणभोजनं च कुर्यात् ।

यजमानः आचम्य, प्राणानायम्य । 'ॐ अपवित्रः पवित्रो वा०' इति आत्मानं हवन-पूजन-सामग्रीं च सम्प्रोक्ष्य । हस्तेऽक्षत-

पुष्पाणि गृहीत्वा 'आ नो भद्राः०'– सुमुखश्चैकदन्तश्च०' इत्यादि-मङ्गलमन्त्रान् पठेत्।

ततो हस्ते जला-ऽक्षत-पुष्प-द्रव्याण्यादाय सङ्कल्पं कुर्यात्। तद्यथा–देशकालौ सङ्कीर्त्य अमुकगोत्रः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्या-ऽऽयुरायोग्य-विपुल-पुत्र-पौत्राद्यनवच्छिन्न-सन्ततिवृद्धि - स्थिरलक्ष्मी - कीर्तिलाभ - शत्रुपराजय - सदभीष्टसिद्ध्यर्थं श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीदेवताप्रीत्यर्थं कृतस्य शतचण्डी-(नवचण्डी-सहस्रचण्डी-लक्षचण्डी वा) पाठसाङ्गतासिद्ध्यर्थं तद्दशांश-हवन-तद्दशांशतर्पण-तद्दशांशमार्जन-तद्दशांशब्राह्मभोजनं च करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्ति-पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्द्धारापूजनमायुष्यमन्त्रजपमाचार्यादि-वरणानि च करिष्ये। तत्राऽऽदौ निर्विघ्नता-सिद्ध्यर्थं गणेशाऽम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये।

तदनन्तरं गणेशपूजनादारभ्य पूर्णाहुतिपर्यन्तं सर्वं कार्यं मत्प्रणीत-

दुर्गार्चनपद्धत्यनुसारेण कुर्यात्। प्रधानहवने तु सप्तशतीप्रतिश्लोके स्वाहान्तहोमः चर्वाज्यद्रव्येण कुर्यादिति विशेषः। तर्पणे–'दुर्गां तर्पयामि।' मार्जने–'दुर्गां मार्जयामि।'

अत्र नवचण्ड्यां नवब्राह्मणाः। शतचण्ड्ययां दश। सहस्रचण्ड्यां शतम्। लक्षचण्ड्यां सहस्रम्। केचिदत्र ग्रहजपार्थमेकमृत्विजं वरयन्ति।

इति नवचण्डी-शतचण्डी-सहस्रचण्डी-लक्षचण्डी हवनप्रयोगः समाप्तः।

शतचण्डी-प्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ

शतचण्डीविधानं तु प्रवक्ष्ये प्रीतये नृणाम्।
नृपोपद्रव आपन्ने दुर्भिक्षे भूमिकम्पने॥ १॥
अतिवृष्ट्यामनावृष्टौ परचक्रभये क्षये।
सर्वे विघ्ना विनश्यन्ति शतचण्डीविधौ कृते॥ २॥

रोगाणां वैरिणां नाशौ धन-पुत्र-समृद्धयः ।
शङ्करस्य भवान्या वा प्रासादनिकटे शुभम् ॥ ३ ॥
मण्डपं द्वारवेद्याढ्यं कुर्यात् स-ध्वज-तोरणम् ।
तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा ॥ ४ ॥
स्नात्वा नित्यक्रियां कृत्वा वृणुयाद् दशवाडवान् ।
जितेन्द्रियान् सदाचारान् कुलीनान् सत्यवादिनः ॥ ५ ॥
व्युत्पन्नांश्चण्डिकापाठरतान् लज्जादयावतः ।
मधुपर्कविधानेन स्वर्ण-वस्त्रादि-दानतः ॥ ६ ॥
जपार्थमासनं मालां दद्यात्तेभ्योऽपि भोजनम् ।
ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः ॥ ७ ॥
भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिकास्तवम् ।
मार्कण्डेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सचेतसः ॥ ८ ॥

नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चाऽयुतं [1]पृथक् ।
(अष्टमी-नवमी-चतुर्दशी-पौर्णमासीषु यथा शतावृत्तिसमाप्ति-र्भवति तथाऽऽरम्भः कर्तव्य इति साम्प्रदायिकाः ।)
यजमानः पूजयेच्च कन्यानां नवकं शुभम् ॥ ९ ॥
द्विवर्षाद्या दशाब्दान्ताः कुमारीः परिपूजयेत् ।
नाऽधिकाङ्गीं न हीनाङ्गीं कुष्ठिनीं च व्रणाङ्किताम् ॥१०॥
अन्धां काणां केकरां च कुरूपां रोमयुक्-तनुम् ।
दासीजातां रोगयुक्तां दुष्टां कन्यां न पूजयेत् ॥११॥
विप्रां सर्वेष्टसंसिद्ध्यै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ।
वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ॥१२॥
द्विवर्षा सा कुमार्युक्ता त्रिमूर्तिर्हायनत्रिका ।
चतुरब्दा तु कल्याणी पञ्चवर्षा तु रोहिणी ॥१३॥

१. पृथक्-सम्पुटीकरणादिति शेषः । प्रत्येकं ब्राह्मणैरयुतजपः कार्यः ।

षडब्दा कालिका प्रोक्ता चण्डिका सप्तहायनी ।
अष्टवर्षा शाम्भवी स्याद् दुर्गा तु नवहायनी ॥१४॥
सुभद्रा दशवर्षोक्ता नाममन्त्रैः प्रपूजयेत् ।
तासामावाहने मन्त्रः प्रोच्यते शङ्करोदितः ॥१५॥
मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातॄणां रूपधारिणीम् ।
नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम् ॥१६॥
कुमारिकादि-कन्यानां पूजामन्त्रान् ब्रुवेऽधुना ।

कन्यापूजनमन्त्राः

जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ! ।
पूजां गृहाण कौमारि ! जगन्मातर्नमोऽस्तु ते ॥१७॥
त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्गज्ञानरूपिणीम् ।
त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ॥१८॥

कालात्मिकां कलातीतां करुण्यहृदयां शिवाम् ।
कल्याणजननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥१९॥
अणिमादि-गुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम् ।
अनन्तशक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम् ॥२०॥
कामाचारां शुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम् ।
कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम् ॥२१॥
चण्डवीरां चण्डमायां चण्ड-मुण्ड-प्रभञ्जनीम् ।
पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां चण्डविक्रमाम् ॥२२॥
सदाऽऽनन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम् ।
सर्वभूतात्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम् ॥२३॥
दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भव-दुःख-विनाशिनीम् ।
पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गर्ति-नाशिनीम् ॥२४॥

सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुख-सौभग्य-दायिनीम् ।
सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम् ॥२५॥

एतैर्मन्त्रैः पुराणोक्तैस्तां तां कन्यां समर्चयेत् ।
गन्धैः पुष्पैर्भक्ष्य-भोज्यैर्वस्त्रैराभरणैरपि ॥२६॥

वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले ।
घटं संस्थाप्य विधिना तत्राऽऽवाह्याऽर्चयेच्छिवाम् ॥२७॥

तदग्रे कन्यकाश्चाऽपि पूजयेद् ब्राह्मणानपि ।
उपचारैस्तु विविधैः पूर्वोक्तावरणादपि ॥२८॥

होमद्रव्याणि

एवं चतुर्दिनं कृत्वा पञ्चमे होममाचरेत् ।
पायसान्नैस्त्रिमध्वक्तैर्द्राक्षारम्भाफलादिभिः ॥२९॥

मातुलिङ्गैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलयुतैस्तिलैः ।
जातीफलैराम्रफलैरन्यैर्मधुर-वस्तुभिः ॥३०॥

सप्तशत्या दशावृत्त्या प्रतिमन्त्रं हुतं चरेत् ।
अयुतं च नवार्णेन स्थापितेऽग्नौ विधानतः ॥३१॥
कृत्वाऽऽवरण-देवानां होमं तन्नाममन्त्रतः ।
कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग् देवमग्निं विसृज्य च ॥३२॥
अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघः कलशोदकैः ।
निष्कं सुवर्णमथवा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत् ॥३३॥
भोजयेच्च शतं विप्रान् भक्ष्य-भोज्यैः पृथग्विधैः ।
तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्त्वा गृह्णीयादाशिषस्तथा ॥३४॥
एवं कृते जगद्वश्यं सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ।
राज्यं धनं यशः पुत्रानिष्टमन्यल्लभेत् सः ॥३५॥

इति मन्त्रमहोदधिवर्णित-शतचण्डीप्रयोगः समाप्तः ।

शून्यागारे शवस्याऽग्रे श्मशाने च चतुष्पथे ।
देवीमन्त्रं जपेद् यस्तु समः सिद्ध्यति साधकः ॥ १ ॥
सूर्योदयं समारभ्य पुनः सूर्योदयान्तरम् ।
तावज्जप्त्वा निरातङ्कः सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥ २ ॥
अर्धरात्रेऽपि मध्याह्ने पुरश्चरणमारभेत् ।
सूर्योदयात् समारभ्य यावत् सूर्योदयान्तरम् ॥ ३ ॥
तावज्जप्त्वा निरातङ्को मन्त्रः कल्पद्रुमो भवेत् ।
प्रातःकालं समारभ्य जपेन्मन्त्रं दिनावधि ॥ ४ ॥

देवीरहस्ये मारीचकल्पतन्त्रे च

'गर्ज गर्जे'ति मन्त्रेण सुरां दद्यात् प्रयत्नतः ।
अथवा माक्षिकं दद्यात् विशेषेण सुरेश्वरि ! ॥ १ ॥
'शूलेने'ति चतुर्मन्त्रैर्नाऽऽहुतिं कश्चिदाचरेत् ।
यदि मोहाच्चरेद् वाऽपि तस्य नाशो न संशयः ॥ २ ॥

'महालक्ष्मी'त्यनेनैव चतुर्धा हवनं चरेत् ।
'एवं स्तुता सुरैर्दिव्यै'र्मन्त्रेणाऽनेन साधकः ॥ ३ ॥
गन्ध-पुष्पाणि संदद्यात् पूजयेज्जगदम्बिकाम् ।
'ततः कोपं च' मन्त्रेण मांसं दद्यान् महेश्वरि ! ॥ ४ ॥
'मुखेन काली' मन्त्रान्ते रक्तं दद्यात् पशोरपि ।
अथवा कपिकाष्ठं च विकल्पेनैव होमयेत् ॥ ५ ॥
'भक्षयन्त्याश्च' मनुना दाडिमीकुसुमेन च ।
'ततोऽहमि'ति मन्त्रेण शाकं दद्यात्तथोत्तमम् ॥ ६ ॥
'तदा' तदे'ति मन्त्रेण सिद्धार्थानपि होमयेत् ।
तदन्ते हवनं कुर्यात् प्रतिश्लोकेन पायसैः ॥ ७ ॥
छागं तु प्रथमे दद्यात् द्वितीये माहिषं तथा ।
तृतीये कारणेनैव सर्वकामार्थसिद्धये ॥ ८ ॥

चतुर्थे तूर्यमांसेन लक्ष्मीकामार्थसिद्धये ।
पञ्चमे शशमांसेन मोहनार्थं महेश्वरि ! ॥ ९ ॥
षष्ठे च सप्तमे देवि ! खड्गेनैव हुनेत्तथा ।
अष्टमे तु महेशानि ! वन्यवाराहकेण च ॥ १० ॥
नवमे मार्जारमांसेन दशमे गोधया तथा ।
रौद्रे कुक्कुटमांसेन सर्वकामार्थसिद्धये ॥ ११ ॥
आदित्ये तु महेशानि जम्बुकेन तथैव च ।
त्रयोदशेऽश्वमांसेन विधिना साधकोत्तमः ॥ १२ ॥
इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित् त्वया ।
अभक्ताय न दातव्यं न देयं यस्य कस्यचित् ॥ १३ ॥
प्रथमे मधुना कुर्याद् द्वितीये गुग्गुलेन च ।
तृतीये च प्रकर्तव्यं माहिषेण घृतेन च ॥ १ ॥

शक्रादीनां स्तुतौ कुर्याद् गन्धा-ऽक्षत-समन्वितैः ।
कदली वेक्षुदण्डैश्च बाणषष्ठे च सप्तमे ॥ २ ॥
रक्तबीजवधे कुर्याद् रक्तचन्दन-मिश्रितम् ।
कुर्याद् होमं प्रयत्नेन नानाद्रव्यैः समन्वितम् ॥ ३ ॥
नवमे दशमे चैव नारायणि-स्तुतौ तथा ।
गन्ध-पुष्पैः प्रकर्तव्यं पायसेन समन्वितम् ॥ ४ ॥
शतपत्रैश्च कर्तव्यं गोरोचन-समन्वितम् ।
द्वादशे त्रयोदशे च कर्तव्यं तु यथाविधिः ॥ ५ ॥
पञ्चखाद्येन कर्तव्यं रहस्यादि यथाक्रमम् ।
एतत् क्रमेण कर्तव्यं द्रव्यं चैव मनोहरम् ॥ ६ ॥
आद्यन्ते च प्रकर्तव्यं पायसं शर्करान्वितम् ।
नील-व्रीहि-यवैश्चैव होतव्यं च घृता-ऽऽलुतम् ।
अन्यथा कुरुते यस्तु तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥ ७ ॥

इति देवीरहस्य-मारीचकल्पतन्त्रोक्तं सप्तशती-मन्त्र-हवन-विधानं समाप्तम् ।

दुर्गासप्तशती-सम्पुट-पाठ-विधिः

देव्युवाच

सम्पुटं कतिधा स्वामिन्-! वेत्तुमिच्छामि तत्त्वतः ।
कथयस्व सुरेशान ! यद्यहं तव वल्लभा ? ॥ १ ॥

ईश्वर उवाच

सम्पुटं द्विविधं ज्ञेयमुदयास्तकरं प्रिये ! ।
शृणूदयन्त्वमत्रादौ पश्चादस्तं वदामि ते ॥ २ ॥
मन्त्रमादौ पुनः श्लोकमन्ते मन्त्रं पुनः पठेत् ।
पुनर्मन्त्रं पुनः श्लोकं क्रमोऽयमुदये शुभः ।
उदयोत्कर्षलाभाय सम्पुटोऽयमुदाहृतः ॥ ३ ॥

अत्र सर्वत्र श्लोकमिति मन्त्रोपलक्षणम् ।

अस्तं चिकित्साशास्त्रेषु शरावाभ्यां कृतं भवेत् ।
तत्तेऽहं प्रवदाम्यत्र एकाग्रकृतमानसः ॥ ४ ॥
मन्त्रमादौ पुनः श्लोकमन्ते मन्त्रविपर्ययम् ।

पुनर्मन्त्रं पुनः श्लोकं पुनर्मन्त्रविपर्ययम् ॥ ५ ॥
मारणोच्चाटने बन्धे सम्पुटोऽयमुदाहृतः ।
प्रकारोऽयमनादृत्य कुर्वन्त्यास्मप्रकल्पितम् ।
रौरवादिषु पच्यन्ते यावदाभूत-संप्लवम् ॥ ६ ॥

अस्य पुरश्चरणस्वरूपं मरीचिकल्पे

कृष्णाऽष्टमीं समारभ्य यावत् कृष्णचतुर्दशी ।
वृद्ध्यैकोत्तरया जाप्यं पूर्वसम्पुटितं तु तत् ॥ ७ ॥
एवं देवि ! मया प्रोक्तः पौरश्चरणिकः क्रमः ।
तदन्ते हवनं कुर्यात् प्रतिश्लोकेन पायसा ॥ ८ ॥
रात्रिसूक्तं प्रतिऋचं तथा देव्याश्च सूक्तकम् ।
हुत्वान्ते प्रजपेत् स्तोत्रमादौ पूजादिकं मुने ! ॥ ९ ॥

इति दुर्गासप्तशती-सम्पुट-पाठविधिः समाप्ता ।

दुर्गा-सप्तशतीस्थ-सिद्ध-सम्पुट-मन्त्र-विधानम्

१. दुःख-दारिद्र्य निवारणार्थ :

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः, स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्य-दुःख-भयहारिणि का त्वदन्या, सर्वोपकार-करणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ॥
(अ० ४, श्लोक १७)

२. विविध उपद्रवों के शमनार्थ :

रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा, यत्रारयो दस्युबलानि यत्र ।
दावानलो यत्र तथाऽब्धिमध्ये, तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥
(अ० ११, श्लोक ३२)

३. विपत्ति नाशक तथा शुभदायक :

करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी, शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ।
(अ० ५, श्लोक ८१)

४. विश्वव्यापी विपत्ति-नाशक :

देवि ! प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद, प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि ! पाहि विश्वं, त्वमीश्वरी देवि ! चराचरस्य ॥
(अ० ११, श्लोक ३)

५. आपत्ति-उद्धारक :

शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे ! । सर्वस्यार्तिहरे देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥

(अ० ११, श्लोक १२)

६. विश्व-सम्बन्धी अभ्युत्थान :

विश्वेश्वरि ! त्वं परिपासि विश्वं, विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम् ।
विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति, विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥

(अ० ११, श्लोक ३२)

७. सामूहिक कल्याणार्थ :

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या, निश्शेष-देवगण-शक्तिसमूह-मूर्त्या ।
तामम्बिकामखिल-देव-महर्षिपूज्यां, भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ॥

(अ० ४, श्लोक ३)

८. पापनाशक :

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि ! पापेभ्योऽनः सुतानिव ॥ (अ० ११, श्लोक २७)

९. भयनिवारक :

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते । भयेभ्यस्त्राहि नो देवि ! दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते ॥

(अ० ११, श्लोक २४)

१०. रोगनाशक :

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥
(अ० ११, श्लोक २९)

११. स्वरक्षणार्थ :

शूलेन पाहि नो देवि ! पाहि खड्गेन चाऽम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिः स्वनेन च ॥ (अ० ४, श्लोक २४)

१२. महामारी नाशक :

जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥ (अ० स्तो ,श्लोक १)

१३. सर्वबाधा प्रशमनार्थ :

सर्वाबाधा-प्रशमनं त्रैलोक्यस्याऽखिलेश्वरि ! ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥ (अ० ११, श्लोक ३९)

१४. सर्वकल्याणार्थ :

सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ! ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ (अ० ११, श्लोक १०)

दु.स.

२४८

१५. सौभाग्य और आरोग्यकारक :

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ (अ० स्तो०, श्लोक १२)

१६. सर्वांगीण अभ्युत्थान :

ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां, तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः ।
धन्यास्त एव निभृतात्मज-भृत्य-दारा, येषां सदाम्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥
(अ० ४, श्लोक १५)

१७. सुलक्षणा पत्नी की उपलब्धि में

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम् । तारिणीं दुर्गसंसार-सागरस्य कुलोद्भवाम् ॥
(अ० स्तो०, श्लोक २४)

१८. समस्त कार्यों की सिद्धि :

शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे ! । सर्वस्यार्तिहरे देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥
(अ० ११, श्लोक १२)

१९. विश्व रक्षणार्थ :

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः, पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा, तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि ! विश्वम् ॥
(अ० ४, श्लोक ५)

वि.स.

२४८

२०–विश्व-ताप से त्राण पाने के लिए :

देवी ! प्रसीद परिपालय नोऽरिभीते, नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः ।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाऽऽशु, उत्पात-पाक-जनिताश्च महोपसर्गान् ॥
(अ० ११, श्लोक ३४)

२१–विश्व के अमांगलिक फल तथा भयनाशक :

यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो, ब्रह्मा, हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च ।
सा चण्डिकाऽखिल-जगत्-परिपालनाय, नाशाय चाऽशुभभयस्य मतिं करोतु ॥
(अ० ४, श्लोक ४)

२२–शक्ति प्राप्ति के लिए :

सृष्टि-स्थिति-विनाशानां शक्तिभूते सनातनि ! । गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥
(अ० ११, श्लोक ११)

२३–धन-पुत्रादि की वृद्धिकारक तथा बाधानाशक :

सर्वाबाधा-विनिर्मुक्तो धन-धान्य-सुतान्वितः। मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥
(अ० १२, श्लोक १३)

२४–प्रसन्नता की उपलब्धि के लिए :

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि ! विश्वार्तिहारिणि ! । त्रैलोक्यवासिनीमीड्ये लोकानां वरदा भव ॥
(अ० ११, श्लोक ३५)

२५–मोक्ष लाभ के लिए :

विधेहि देवि ! कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥

(अ० स्तो०, श्लोक १४)

२६–सम्पूर्ण विद्याओं की प्राप्ति तथा समस्त स्त्रियों में मातृभावनात्मक :

विद्याः समस्तास्तव देवि ! भेदाः, स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्, का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ? ॥

(अ० ११, श्लोक ६)

२७–पाप नाश एवं भक्ति प्राप्ति के निमित्त :

न तेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥

(अ० स्तो०, श्लोक ५)

२८–स्वर्ग तथा मोक्ष प्राप्ति के लिए :

सर्वभूता यदा देवि ! स्वर्ग-मुक्ति प्रदायिनी । त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥

(अ० ११, श्लोक ७)

२९–स्वप्न का शुभाऽशुभ फल :

दुर्गे देवि ! नमस्तुभ्यं सर्वकामार्थ-साधिके । मम सिद्धिमसिद्धिं वा स्वप्ने सर्वं प्रदर्शय ॥

(?)

३०–स्वराज्य की प्राप्ति :

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि । अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात् ॥

(अ० १३, श्लोक ७)

दु. स.

२५१

३१–इच्छित फलप्राप्ति :

एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ॥ (अ० १३, श्लोक २८)

३२–बालरोग नाशक :

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् । सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव ॥

(अ० ११, श्लोक २७)

३३–शत्रुनाशक :

मम वैरिवशं यातः कान् भोगानुपलप्स्यते । ये ममानुगता नित्यं प्रसाद-धन-भोजनैः ॥

(अ० १, श्लोक १४)

३४–विद्यालाभार्थ :

इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तः स्मिता जगौ । दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् ॥

(अ० ५, श्लोक ११६)

३५–सम्पत्तिवर्धक :

इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः । चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटीकुटिलाननौ ॥

(अ० २, श्लोक ९)

३६–सुख की वृद्धि :

शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-मुद्गीथरम्य-पदपाठवतां च साम्नाम् ।

देवी त्रयी भगवती भव-भावनाय, वार्त्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री ॥

(अ० ४, श्लोक १०)

सि स.

२५१

३७-राज्यवशीकरण :

ममाऽस्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढता ॥ (अ० १, श्लोक ४५)

३८-सम्मोहन :

ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा । बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ॥
(अ० १, श्लोक ५५)

३९-मारण योग :

एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽरूढा तं महासुरम् । पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत् ॥
(अ० ३, श्लोक ४०)

४०-धनवृद्धि :

का सोस्मितां हिरण्यप्राकारमार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ (श्री सूक्त, श्लोक ४)

४१-अर्थोपार्जन तथा सर्वकार्य की सिद्धि निमित्त :

भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते ॥ (अ० ४, श्लोक ३४)

४२-बन्धनमुक्ति :

सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये । सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ॥
(अ० १, श्लोक ५७)

४३-सर्वजन वशीकरण :

महामाया हरेश्चैषा तया सम्मोह्यते जगत । ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ॥
(अ० १, श्लोक ५५)

दु. स.

४४–सर्वजन सम्मोहन :

बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति । तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराऽचरम् ॥
(अ० १, श्लोक ५६)

४५–दुर्जन सम्मोहन :

कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ।
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि ! संस्तुता ॥ (अ० १, श्लोक ८५)

४६–सफलता वर्धक :

धर्म्माणि देवि ! सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति ।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवती प्रसादात्, लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि ! तेन ॥
(अ० ४, श्लोक १६)

४७–निर्बाध रूप से कार्य की सम्पन्नता :

त्वयैतद् धार्यते विश्वं त्वयैतत् सृज्यते जगत् । (अ० १, श्लोक ७५)

४८–दिगबन्धन :

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे । भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ! ॥
(अ० ४, श्लोक २५)

४९–शत्रुओं द्वारा कृत प्रयोगों का निष्फलीकरण :

ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः । आजघान शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा ॥
(अ० ९, श्लोक २९)

शि स.

५०—प्रभावशाली वाक्शक्ति :

मेधासि देवि ! विदिताऽखिलशास्त्रसारा, दुर्गाऽसि दुर्ग-भवसागर-नौरसङ्गा ।
श्रीः-कैटभारि-हृदयैक-कृताधिवासा, गौरी त्वमेव शशिमौलि-कृतप्रतिष्ठा ॥

(अ० ४, श्लोक ११)

५१—प्रशंसाकारक :

सृष्टि-स्थिति-विनाशानां शक्तिभूते सनातनि ! । गुणाश्रये गुणमये नारायणि ! नमोऽस्तुते ॥

(अ० ११, श्लोक ११)

५२—मानसिक विषमता :

पुनरप्यति रौद्रेण रूपेण पृथिवीतले । अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥

(अ० ११, श्लोक ४३)

५३—शत्रुमुख स्तम्भन एवं पुत्रोत्पत्ति के लिए :

स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्कटात् । मम प्रभावात् सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा ॥

(अ० १२, श्लोक २९)

५४—देवमुख स्तम्भन :

उपसर्गानशेषांस्तु महामारी-समुद्भवान् । तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ॥

(अ० १२, श्लोक ८)

५५–दुःस्वप्ननाशक :

उपसर्गाः समं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः । दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते ॥

(अ० १२, श्लोक १८)

५६–देवी की सन्तुष्टि :

स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तं परं जपन् । तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम् ॥

(अ० १३, श्लोक १०)

५७–विविध फलकारी :

परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका । (अ० १३, श्लोक १३)

इति दुर्गासप्तशतीस्थ-सम्पुट-मन्त्रविधानं समाप्तम् ।



सप्तश्लोकी दुर्गा

शिव उवाच

देवि ! त्वं भक्तसुलभे सर्वकार्यविधायिनि । कलौ हि कार्यसिद्ध्यर्थमुपायं ब्रूहि यत्नतः ॥

देव्युवाच

शृणु देव प्रवक्ष्यामि कलौ सर्वेष्टसाधनम् । मया तवैव स्नेहेनाऽप्यम्बास्तुतिः प्रकाश्यते ॥

ॐ अस्य श्रीदुर्गा-सप्तश्लोकीस्तोत्र-मन्त्रस्य नारायण ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः श्रीदुर्गाप्रीत्यर्थं सप्तश्लोकीदुर्गापाठे विनियोगः ।

ॐ ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा । बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ॥ १ ॥

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः । स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणी का त्वदन्या, सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ॥ २ ॥

सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे । सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते । भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा, रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां, त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥ ६ ॥

सर्वाबाधा-प्रशमनं त्रैलोक्यस्याऽखिलेश्वरि । एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥ ७ ॥

इति सप्तश्लोकी दुर्गा सम्पूर्णा ।

देवी-नीराजनम्

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामे गौरी ।
मैया जय मंगलकरणी, मैया जय आनन्दकरणी ॥
तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवरी ॥१॥ जय अम्बे०॥
माँग सिन्दूर विराजत, टीको मृगमद को ।
उज्ज्वल से दोऊ नैना, चन्द्रवदन नीको ॥२॥ जय अम्बे०॥
कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजे ।
रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजे ॥३॥ जय अम्बे०॥
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी ।
सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुःख हारी ॥४॥ जय अम्बे०॥
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती ।
कोटिक चन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योति ॥५॥ जय अम्बे०॥

शुम्भ-निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती ।
धूम्र विलोचन नैंना, निशिदिन मदमाती ॥६॥ जय अम्बे०॥
चण्ड-मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे ।
मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे ॥७॥ जय अम्बे०॥
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी ।
आगम निगम बखानी, तुम शिव पटरानी ॥८॥ जय अम्बे०॥
चौंसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरों ।
बाजत ताल मृदंगा, और बजे डमरू ॥९॥ जय अम्बे०॥
तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता ।
भक्तन की दुःख हरता, सुख-सम्पति करता ॥१०॥ जय अम्बे०॥
भुजा चार अति शोभित, वरहु अभयधारी ।
मनवांछित फल पावत, सेवत नर-नारी ॥११॥ जय अम्बे०॥

कंचन थाल विराजत, अगर कपुर बाती ।
श्री मालकेतु में राजत, कोटिरत्न ज्योति ॥१२॥ जय अम्बे॰ ॥
ये अम्बे जी की आरति, जो कोई नर गावैं ।
कहत शिवानन्द स्वामी, सुख-सम्पति पावैं ॥१३॥ जय अम्बे॰ ॥



देवी-पुष्पाञ्जलि-स्तोत्रम्

अयि गिरि-नन्दिनि नन्दितमेदिनि विश्व-विनोदिनि नन्दिनुते
गिरिवर-विन्ध्य-शिरोऽधि-निवासिनि विष्णु-बिलासिनि जिष्णुनुते ।
भगवति हे शितिकण्ठ-कुटुम्बिनि भूरिकुटुम्बिनि भूतिकृते
जय-जय हे महिषासुर मर्दिनि ! रम्यकपर्दिनि ! शैलसुते ! ॥१॥
सुरवरवर्षिणि दुर्धरधर्षिणि दुर्मुखमर्षिणि हर्षरते
त्रिभुवनपोषिणि शङ्करतोषिणि कल्मषमोषिणि घोषरते ।
दनुज-निरोषिणि दुर्मद-शोषिणि दुर्मुनि-रोषिणि सिन्धुसुते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥२॥

अयि जगदम्ब ! कदम्ब-वन-प्रियवासिनि तोषिणि हासरते
शिखरि-शिरोमणि-तुङ्गहिमालय-शृङ्ग-निजालय-मध्यगते ।
मधु-मधुरे मधु-कैटभ-गञ्जिनि महिष-विदारिणि रासरते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥३॥

अयि निजहुँकृति-मात्रनिराकृत-धूम्र-विलोचन-धूम्रशते
समर-विशोषित-रोषित-शोणित-बीजसमुद्भव-बीजलते ।
शिव-शिव शुम्भ-निशुम्भ-महाहव-तर्पित-भूत-पिशाचरते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥४॥

अयि शतखण्ड-विखण्डित-रुण्ड-वितुण्डित-शुण्ड-गजाधिपते
निज-भुजदण्ड-निपातित-चण्ड-विपाटित-मुण्ड-भटाधिपते ।
रिपुगज-गण्ड-विदारण-चण्ड-पराक्रम-शौण्ड-मृगाधिपते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥५॥

धनुरनुषङ्ग-रणक्षणसङ्ग-परिस्फुरदङ्ग-नटत्कटके
कनक-पिशङ्ग-पृषत्कनिषङ्ग-रसद्भट-शृङ्ग-हताबटुके ।
हत-चतुरङ्ग-बल-क्षितिरङ्ग-घटद्-बहुरङ्ग-रटद्-बटुके
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥६॥

अयि रणदुर्मद-शत्रुवधाद्धुर-दुर्धर-निर्भर-शक्तिभृते
चतुर-विचार-धुरीण-महाशय-दूतकृत-प्रमथाधिपते ।
दुरित-दुरीह-दुराशय-दुर्मति-दानवदूत-दुरन्तगते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनी रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥७॥
अयि शरणागत-वैरिवधू-जन-वीरवराभय-दायिकरे
त्रिभुवन-मस्तक-शूलविरोधि-शिरोधि-कृतामल-शूलकरे ।
दुमि-दुमितामर-दुन्दुभिनाद-मुहुर्मुखरीकृत-दिङ्निकरे
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥८॥
सुरललना-ततथेयित-थेयित-थाभिनयोत्तर-नृत्यरते
कृतकुकुथा-कुकुथोदि-डदाडिक-ताल-कुतूहल-गानरते ।
धुधुकुट-धूधुट-धिन्धिमितध्वनि-धीर-मृदङ्ग-निनादरते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥९॥
जय-जय जाप्यजये जयशब्द-परस्तुति-तत्पर-विश्वनुते
झण-झण-झिंझिम-झिंकृत-नूपुर-शिञ्जित-मोहित-भूतपते ।
नटित-नटार्ध-नटीनटनायक-नाट-ननाटित-नाट्यरते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥१०॥

अयि सुमनः-सुमनः-सुमनः-सुमनः-सुमनोरम-कान्तियुते
श्रितरजनी-रजनी-रजनी-रजनी-रजनीकर-वक्त्रभृते ।
सुनयन-विभ्रमर-भ्रमर-भ्रमर-भ्रमर-भ्रमराभिद्दते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनी रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥११॥

महित-महाहव-मल्लमतल्लिक-वल्लित-रल्लित-मल्लिरते
विरचित-वल्लि-कपालिक-पल्लिक-झिल्लिक-भिल्लिक-वर्गवृते ।
श्रुत-कृतपुल्ल-समुल्लसितारुण-तल्लज-पल्लव-सल्ललिते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥१२॥

अयि सुदतीजन-लालस-मानस-मोहन-मन्मथ-राजसुते
अविरल-गण्डगलन्-मदमेदुर-मत्त-मतङ्गजराजगते ।
त्रिभुवन-भूषण-भूतकलानिधि-रूप-पयोनिधि-राजसुते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥१३॥

कमलदलामल-कोमल-कान्ति-कलाकलितामल-भालतले
सकल-विलास-कलानिलय-क्रम-केलि-चलत्कल-हंसकुले ।
अलिकुल-सङ्कुल-कुन्तल-मण्डल-मौलिमिलद्-बकुलालिकुले
जय जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ! ॥१४॥

तव चरणं शरणं करवाणि सुवाणि पथं मम देहि शिवम्
जय-जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥१९॥
तव विमलेन्दुकलं वदनेन्दुमलं कलमन्ननुकूलयते
किमु पुरुहूत-पुरीन्दुमुखी सुमुखीभिरसौ विमुखीक्रियते ।
मम तु मतं शिवमानघने भवती कृपया किमु न क्रियते
जय-जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥२०॥
अयि मयि दीनदयालुतया कृपयैव त्वया भवितव्यमुमे
अयि जगती जननीति यथाऽसि मयाऽसि तथाऽनुमतासि रमे ।
यदुचितमत्र भवत्पुरगं कुरु शाम्भवि देवि दयां कुरु मे
जय-जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥२१॥

स्तुतिमिमां स्तिमितः सुसमाधिना
नियमतो यमतोऽनुदिनं पठेत् ।
परमया रमया स निषेव्यते
परिजनोऽरिजनोऽपि च तं भजेत् ॥२२॥

इति देवरिया-मण्डलान्तर्गत-'मझौली राज्य (सम्प्रति वाराणसीस्थ) वास्तव्येन आचार्य-पण्डित-
श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिणा सम्पादिता विविध-विषयविभूषिता च
दुर्गासप्तशती समाप्ता ।

मुद्रक—संसार प्रेस, काशीपुरा, वाराणसी :

करमुरलीरव-वर्जित-कूजित-लज्जित-कोकिल-मञ्जुमते
मिलित-मिलिन्द-मनोहर-गुञ्जित-रञ्जित-शैल-निकुञ्जगते ।
निजगण-भूत महाशबरीगण-रङ्गण-सम्भृत-केलिरते
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥१५॥

कटितट-पीत-दुकूल-विचित्र-मयूख-तिरस्कृत-चण्डरुते
जित-कनकाचल-मौलि-मदोर्जित-गर्जित-कुञ्जर-कुम्भकुचे ।
प्रणत-सुराऽसुर-मौलिमणि-स्फुरदंशु-लसन्नख-चन्द्ररुचे
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥१६॥

विजित-सहस्र-करैक-सहस्र-करैक-सहस्रकरैकनुते
कृत-सुरतारक-सङ्गरतारक-संगरतारक-सूनुनुते
सुरथ-समाधि-समान-समाधि-समान-समाधि-सुजाप्यरते ।
जय-जय हे महिषासुर-मर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥१७॥

पदकमलं करुणानिलये वरिवस्यति योऽनुदिनं सुशिवे
अयि कमले कमलानिलये कमलानिलयः स कथं न भवेत् ।
तव पदमेव परं पदमस्त्विवति शीलयतो मम किं न शिवे
जय-जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥१८॥

कनक-लसत्-कलशीकजलै-रनुषिञ्चति तेऽङ्गण-रङ्गभुवम्
भजति स किं न शचीकुच-कुम्भ-नटी-परिरम्भ-सुखानुभवम् ।

[OrderDescription]
,CREATED=14.07.20 12:19
,TRANSFERRED=2020/07/14 at 12:46:12
,PAGES=273
,TYPE=STD
,NAME=S0003311
,Book Name=M-2519-SHRIDURGA SHAPTSHATI
,ORDER_TEXT=
,[PAGELIST]
,FILE1=00000001.TIF
,FILE2=00000002.TIF
,FILE3=00000003.TIF
,FILE4=00000004.TIF
,FILE5=00000005.TIF
,FILE6=00000006.TIF
,FILE7=00000007.TIF

FILE8=00000008.TIF
,FILE9=00000009.TIF
,FILE10=00000010.TIF
,FILE11=00000011.TIF
,FILE12=00000012.TIF
,FILE13=00000013.TIF
,FILE14=00000014.TIF
,FILE15=00000015.TIF
,FILE16=00000016.TIF
,FILE17=00000017.TIF
,FILE18=00000018.TIF
,FILE19=00000019.TIF
,FILE20=00000020.TIF
,FILE21=00000021.TIF
,FILE22=00000022.TIF
,FILE23=00000023.TIF

FILE24=00000024.TIF
,FILE25=00000025.TIF
,FILE26=00000026.TIF
,FILE27=00000027.TIF
,FILE28=00000028.TIF
,FILE29=00000029.TIF
,FILE30=00000030.TIF
,FILE31=00000031.TIF
,FILE32=00000032.TIF
,FILE33=00000033.TIF
,FILE34=00000034.TIF
,FILE35=00000035.TIF
,FILE36=00000036.TIF
,FILE37=00000037.TIF
,FILE38=00000038.TIF
,FILE39=00000039.TIF

FILE40=00000040.TIF
,FILE41=00000041.TIF
,FILE42=00000042.TIF
,FILE43=00000043.TIF
,FILE44=00000044.TIF
,FILE45=00000045.TIF
,FILE46=00000046.TIF
,FILE47=00000047.TIF
,FILE48=00000048.TIF
,FILE49=00000049.TIF
,FILE50=00000050.TIF
,FILE51=00000051.TIF
,FILE52=00000052.TIF
,FILE53=00000053.TIF
,FILE54=00000054.TIF
,FILE55=00000055.TIF

FILE56=00000056.TIF
,FILE57=00000057.TIF
,FILE58=00000058.TIF
,FILE59=00000059.TIF
,FILE60=00000060.TIF
,FILE61=00000061.TIF
,FILE62=00000062.TIF
,FILE63=00000063.TIF
,FILE64=00000064.TIF
,FILE65=00000065.TIF
,FILE66=00000066.TIF
,FILE67=00000067.TIF
,FILE68=00000068.TIF
,FILE69=00000069.TIF
,FILE70=00000070.TIF
,FILE71=00000071.TIF

FILE72=00000072.TIF
,FILE73=00000073.TIF
,FILE74=00000074.TIF
,FILE75=00000075.TIF
,FILE76=00000076.TIF
,FILE77=00000077.TIF
,FILE78=00000078.TIF
,FILE79=00000079.TIF
,FILE80=00000080.TIF
,FILE81=00000081.TIF
,FILE82=00000082.TIF
,FILE83=00000083.TIF
,FILE84=00000084.TIF
,FILE85=00000085.TIF
,FILE86=00000086.TIF
,FILE87=00000087.TIF

FILE88=00000088.TIF
,FILE89=00000089.TIF
,FILE90=00000090.TIF
,FILE91=00000091.TIF
,FILE92=00000092.TIF
,FILE93=00000093.TIF
,FILE94=00000094.TIF
,FILE95=00000095.TIF
,FILE96=00000096.TIF
,FILE97=00000097.TIF
,FILE98=00000098.TIF
,FILE99=00000099.TIF
,FILE100=00000100.TIF
,FILE101=00000101.TIF
,FILE102=00000102.TIF
,FILE103=00000103.TIF

FILE104=00000104.TIF
,FILE105=00000105.TIF
,FILE106=00000106.TIF
,FILE107=00000107.TIF
,FILE108=00000108.TIF
,FILE109=00000109.TIF
,FILE110=00000110.TIF
,FILE111=00000111.TIF
,FILE112=00000112.TIF
,FILE113=00000113.TIF
,FILE114=00000114.TIF
,FILE115=00000115.TIF
,FILE116=00000116.TIF
,FILE117=00000117.TIF
,FILE118=00000118.TIF
,FILE119=00000119.TIF

FILE120=00000120.TIF
,FILE121=00000121.TIF
,FILE122=00000122.TIF
,FILE123=00000123.TIF
,FILE124=00000124.TIF
,FILE125=00000125.TIF
,FILE126=00000126.TIF
,FILE127=00000127.TIF
,FILE128=00000128.TIF
,FILE129=00000129.TIF
,FILE130=00000130.TIF
,FILE131=00000131.TIF
,FILE132=00000132.TIF
,FILE133=00000133.TIF
,FILE134=00000134.TIF
,FILE135=00000135.TIF

FILE136=00000136.TIF
,FILE137=00000137.TIF
,FILE138=00000138.TIF
,FILE139=00000139.TIF
,FILE140=00000140.TIF
,FILE141=00000141.TIF
,FILE142=00000142.TIF
,FILE143=00000143.TIF
,FILE144=00000144.TIF
,FILE145=00000145.TIF
,FILE146=00000146.TIF
,FILE147=00000147.TIF
,FILE148=00000148.TIF
,FILE149=00000149.TIF
,FILE150=00000150.TIF
,FILE151=00000151.TIF

FILE152=00000152.TIF
,FILE153=00000153.TIF
,FILE154=00000154.TIF
,FILE155=00000155.TIF
,FILE156=00000156.TIF
,FILE157=00000157.TIF
,FILE158=00000158.TIF
,FILE159=00000159.TIF
,FILE160=00000160.TIF
,FILE161=00000161.TIF
,FILE162=00000162.TIF
,FILE163=00000163.TIF
,FILE164=00000164.TIF
,FILE165=00000165.TIF
,FILE166=00000166.TIF
,FILE167=00000167.TIF

FILE168=00000168.TIF
,FILE169=00000169.TIF
,FILE170=00000170.TIF
,FILE171=00000171.TIF
,FILE172=00000172.TIF
,FILE173=00000173.TIF
,FILE174=00000174.TIF
,FILE175=00000175.TIF
,FILE176=00000176.TIF
,FILE177=00000177.TIF
,FILE178=00000178.TIF
,FILE179=00000179.TIF
,FILE180=00000180.TIF
,FILE181=00000181.TIF
,FILE182=00000182.TIF
,FILE183=00000183.TIF

FILE184=00000184.TIF
,FILE185=00000185.TIF
,FILE186=00000186.TIF
,FILE187=00000187.TIF
,FILE188=00000188.TIF
,FILE189=00000189.TIF
,FILE190=00000190.TIF
,FILE191=00000191.TIF
,FILE192=00000192.TIF
,FILE193=00000193.TIF
,FILE194=00000194.TIF
,FILE195=00000195.TIF
,FILE196=00000196.TIF
,FILE197=00000197.TIF
,FILE198=00000198.TIF
,FILE199=00000199.TIF

FILE200=00000200.TIF
,FILE201=00000201.TIF
,FILE202=00000202.TIF
,FILE203=00000203.TIF
,FILE204=00000204.TIF
,FILE205=00000205.TIF
,FILE206=00000206.TIF
,FILE207=00000207.TIF
,FILE208=00000208.TIF
,FILE209=00000209.TIF
,FILE210=00000210.TIF
,FILE211=00000211.TIF
,FILE212=00000212.TIF
,FILE213=00000213.TIF
,FILE214=00000214.TIF
,FILE215=00000215.TIF

FILE216=00000216.TIF
,FILE217=00000217.TIF
,FILE218=00000218.TIF
,FILE219=00000219.TIF
,FILE220=00000220.TIF
,FILE221=00000221.TIF
,FILE222=00000222.TIF
,FILE223=00000223.TIF
,FILE224=00000224.TIF
,FILE225=00000225.TIF
,FILE226=00000226.TIF
,FILE227=00000227.TIF
,FILE228=00000228.TIF
,FILE229=00000229.TIF
,FILE230=00000230.TIF
,FILE231=00000231.TIF

FILE232=00000232.TIF
,FILE233=00000233.TIF
,FILE234=00000234.TIF
,FILE235=00000235.TIF
,FILE236=00000236.TIF
,FILE237=00000237.TIF
,FILE238=00000238.TIF
,FILE239=00000239.TIF
,FILE240=00000240.TIF
,FILE241=00000241.TIF
,FILE242=00000242.TIF
,FILE243=00000243.TIF
,FILE244=00000244.TIF
,FILE245=00000245.TIF
,FILE246=00000246.TIF
,FILE247=00000247.TIF

FILE248=00000248.TIF
,FILE249=00000249.TIF
,FILE250=00000250.TIF
,FILE251=00000251.TIF
,FILE252=00000252.TIF
,FILE253=00000253.TIF
,FILE254=00000254.TIF
,FILE255=00000255.TIF
,FILE256=00000256.TIF
,FILE257=00000257.TIF
,FILE258=00000258.TIF
,FILE259=00000259.TIF
,FILE260=00000260.TIF
,FILE261=00000261.TIF
,FILE262=00000262.TIF
,FILE263=00000263.TIF

FILE264=00000264.TIF
,FILE265=00000265.TIF
,FILE266=00000266.TIF
,FILE267=00000267.TIF
,FILE268=00000268.TIF
,FILE269=00000269.TIF
,FILE270=00000270.TIF
,FILE271=00000271.TIF
,FILE272=00000272.TIF
,FILE273=00000273.TIF
,